ऊर्जा

संसाधन और संरक्षण

लेखक
डॉ० दिनेश मणि

Digital India
Power To Empower

सत्यमेव जयते

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
(माध्यमिक शिक्षा और उच्चतर शिक्षा विभाग)
भारत सरकार

भौतिकी पाठमाला - 2

ऊर्जा : संसाधन और संरक्षण

लेखक
डॉ० दिनेश मणि, डी.एससी.
व्याख्याता, रसायन विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,

सत्यमेव जयते

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
(माध्यमिक शिक्षा और उच्चतर शिक्षा विभाग)
भारत सरकार
2000

© भारत सरकार, 2000
© Government of India, 2000

प्रथम ई-संस्करण, 2019

प्रकाशक

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय,
(माध्यमिक शिक्षा और उच्चतर शिक्षा विभाग)
पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम्,
नई दिल्ली - 110 066

मूल्य : देश में रु.
विदेश में पौंड/डॉलर

बिक्री हेतु संपर्क

(1) बिक्री एकक
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम्,
नई दिल्ली - 110 066

(2) प्रकाशन नियंत्रक
प्रकाशन विभाग, भारत सरकार
सिविल लाइन्स, दिल्ली-110 054

अध्यक्ष की कलम से

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, उच्चतर शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, 1961 में अपनी स्थापना समय से ही, उसे सौंपे गए कार्य-भार अनुसार भारतीय भाषाओं में शिक्षा माध्यम परिवर्तन हेतु विभिन्न विषयों में भारतीय भाषाओं की मानक शब्दावली तथा विश्वविद्यालय स्तरीय विभिन्न विषयक पुस्तकों का निर्माण एवं प्रकाशन करता आ रहा है । इस दीर्घ अवधि में आयोग ने विभिन्न आवश्यक विषयों से संबंधित अंग्रेजी-हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषा शब्दावलियों का निर्माण एवं प्रकाशन किया है । इक्कीसवीं सदी के सूचना प्रौद्योगिकी के इस दौर में शिक्षा एवं ज्ञानार्जन के साधन को सद्यः उपलब्धता में क्रांतिकारी परिवर्तन आया है । ई-गवर्नेंस, ई-व्यवसाय एवं डिजिटल इंडिया जैसे क्रिया-कलाप दैनंदिन जीवन के अंग हो गए हैं। ऐसे में आयोग ने भी इन अधुनातन साधनों का उपयोग करने का निश्चय किया । इस क्रम में आयोग द्वारा निर्मित सभी शब्दावलियों, परिभाषा-कोशों का ई-संस्करण आपको सहज रूप से उपलब्ध कराने के उद्देश्य से ई-बुक निर्माण योजना पर कार्य प्रारंभ किया गया है । इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु **'ऊर्जा : संसाधन और संरक्षण'** का ई-बुक का संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है ।

मुझे इस पुस्तक का ई-संस्करण आप सबको सुलभ कराते हुए अत्यंत हर्ष हो रहा है । इसी भांति आयोग द्वारा अन्य विषयों के भी हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं की शब्दावली, परिभाषा-कोशों का ई-संस्करण प्रकाशित करने के कार्य भी प्रगति पर है । आयोग को सौंपे गए महत्वपूर्ण दायित्व में से एक दायित्व, निर्मित शब्दवलियाँ प्रयोक्ताओं तक पहुँचाने का रहा है । इलेक्ट्रोनिक माध्यम से आयोग अपने प्रकाशनों के प्रचार-प्रसार में अधिक प्रभावशाली होगा । मुझे आशा है आयोग द्वारा किए जा रहे इस प्रयास से निर्मित शब्दावलियाँ जन-जन तक पहुंचेगी साथ ही सभी जिज्ञासु इस ई-संस्करण का अधिक से अधिक लाभ उठा सकेंगे।

प्रो. अवनीश कुमार
अध्यक्ष

ऊर्जा : संसाधन और संरक्षण ई-शब्द संग्रह निर्माण से संबद्ध आयोग के अधिकारी

प्रधान संपादक

प्रो. अवनीश कुमार

अध्यक्ष

संपादक

डॉ. अशोक एन. सेलवटकर

(सहायक निदेशक)

श्री शिव कुमार चौधरी

(सहायक निदेशक)

श्री जय सिंह रावत

(सहायक वैज्ञानिक अधिकारी)

श्रीमती चक्प्रम बिनोदिनी देवी

(सहायक वैज्ञानिक अधिकारी)

सुश्री मर्सी ललरोहलू हमार

(सहायक वैज्ञानिक अधिकारी)

आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्य

अध्यक्ष

डा. राय अवधेश कुमार श्रीवास्तव

सदस्य

1. डॉ. अनूप चोपड़ा
प्रोफेसर, ई.एन.टी.,
लोकनायक जयप्रकाश
नारायण अस्पताल,
नई दिल्ली

2. श्री डी.बी. डिमरी
पूर्व महानिदेशक,
भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण,
कलकत्ता

2. प्रो. कीर्ति सिंह
सदस्य,
कृषि वैज्ञानिक चयन बोर्ड,
पूसा, नई दिल्ली

5. प्रो. प्रेम सिंह
भाषाविज्ञान विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

3. प्रो. बी.डी. नौटियाल
सिविल इंजीनियरी विभाग,
बनारस हिंदू विश्वविद्यालय,
वाराणसी

6. प्रो. लक्ष्मण सिंह कोठारी
पूर्व अध्यक्ष, भौतिकी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली

पुनरीक्षण एवं संपादन

प्रधान संपादक
डॉ. राय अवधेश कुमार श्रीवास्तव

संपादक
श्री दुर्गा प्रसाद मिश्र

पुनरीक्षक
श्री प्रेमानंद चंदोला

प्रकाशन
श्री धीरेंद्र राय
डॉ. प्रेमनारायण शुक्ल

कलाकार
श्री आलोक वाही

प्रस्तावना

भारत सरकार ने विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षा-माध्यम के रूप में हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के विकास के लिए तत्कालीन शिक्षा मंत्रालय (अब मानव संसाधन विकास मंत्रालय) के अधीन सन् 1961 में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग की स्थापना की। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आयोग ने अनेक शब्द-संग्रहों, परिभाषा कोशों, चयनिकाओं, पत्रिकाओं, पाठमालाओं तथा विश्वविद्यालय-स्तरीय हिंदी पुस्तकों का निर्माण एवं प्रकाशन किया है।

पाठमालाओं के निर्माण में इस बात का ध्यान रखा गया है कि उनकी विषय-सामग्री अद्यतन तथा उपयोगी हो और भाषा सरल, बोधगम्य एवं आकर्षक हो ताकि अध्यापक भी हिंदी माध्यम से अपने-अपने विषय को पढ़ाने में सक्षम हो सकें।

प्रस्तुत पाठमाला 'ऊर्जा : संसाधन और संरक्षण' इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विज्ञान विभाग के व्याख्याता डॉ. दिनेश मणि ने लिखी है जो दस अध्यायों में विन्यस्त है। लेखक ने ऊर्जा के विभिन्न स्रोतों तथा पहलुओं पर गहनता से लेखनी चलाई है। इसका पुनरीक्षण वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा प्रकाशित "विज्ञान गरिमा सिंधु" नामक पत्रिका के पूर्व संपादक श्री प्रेमानंद चंदोला ने किया है।

पाठमाला की भाषा सरल, बोधगम्य और प्रवाहपूर्ण है। लेखक ने इसमें हिंदी की मानक तकनीकी शब्दावली का प्रयोग करने का पूरा प्रयास किया है और पुस्तक के अंत में सारणियाँ, संदर्भ तथा शब्दावली सूचियाँ (हिंदी-अंग्रेजी एवं अंग्रेजी-हिंदी) भी दी है।

मुझे विश्वास है कि भौतिकी की यह दूसरी पाठमाला विश्वविद्यालय स्तर के छात्रों, अनुसंधानकर्ताओं एवं प्रयोगकर्ताओं के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

नई दिल्ली
मई, 2000

(डा. राय अवधेश कुमार श्रीवास्तव)
अध्यक्ष

भूमिका

किसी भी राष्ट्र के सामाजिक तथा औद्योगिक विकास में ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्थान है। ऊर्जा की प्रति व्यक्ति खपत किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सूचक है। औद्योगिकीकरण तथा जनसंख्या वृद्धि के कारण ऊर्जा के परंपरागत स्रोतों पर बड़ा दबाव पड़ा है। लोगों का जीवन स्तर निरंतर ऊँचा होने के कारण नई-नई उपभोक्ता वस्तुएँ जुटाने के लिए भी ऊर्जा की खपत में लगातार बढ़ोत्तरी होती जा रही है। फलस्वरूप ऊर्जा संकट की स्थिति उत्पन्न हो रही है।

ऊर्जा की मांग और आपूर्ति में भारी अंतर होने के कारण भारत-जैसे विकासशील देश के लिए ऊर्जा-उत्पादन के साथ-साथ ऊर्जा संरक्षण की आवश्यकता अधिक प्रासंगिक है। अब प्रश्न यह नहीं है कि ऊर्जा संरक्षण करें अथवा न करें या कब करें बल्कि यह कि कितना शीघ्र और कितना अधिक करें। वर्तमान आर्थिक उदारीकरण के दौर में प्रतिस्पर्धा में खरे उतरने और उन्नति करने के लिए हमें ऊर्जा उत्पादन और ऊर्जा संरक्षण में सफल होना अत्यंत आवश्यक है।

प्रस्तुत मोनोग्राफ ऊर्जा के परंपरागत तथा अपरंपरागत संसाधनों के संरक्षण से संबंधित अद्यतन जानकारी को समाविष्ट करते हुए लिखा गया है। विश्वास है कि यह मोनोग्राफ विद्यार्थियों से लेकर सभी आयुवर्ग के लोगों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

पाठकों की प्रतिक्रियाओं तथा सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी।

10 अगस्त, 1999
इलाहाबाद

दिनेश मणि
संपादक, विज्ञान,
विज्ञान परिषद,

संपादकीय

मानव सृष्टि के आरंभ से ही किसी न किसी रूप में ऊर्जा का उपयोग करता आ रहा है। पहले केवल लकड़ी ईंधन के रूप में प्रयुक्त होती थी, परंतु कालांतर में औद्योगिक क्रांति के दौरान कोयला, तेल और गैस की खपत दिनोंदिन बढ़ती गई। इसके अतिरिक्त जनसंख्या में निरंतर वृद्धि और लोगों के जीवन-स्तर में सुधार के कारण संप्रति हमारे ऊर्जा - साधनों पर अधिक दबाव पड़ रहा है। जो देश जितना ही विकसित होता है, वहां उतनी ही अधिक ऊर्जा की खपत होती है।

ऊर्जा से संबंधित इतिहास को देखने पर पता चलता है कि सभ्यता के प्रारंभ से लेकर पिछली कुछ शताब्दियों तक मानव मुख्यतः ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतों पर ही निर्भर था। पाषाण-युग के आदि मानव ने पत्थर को पत्थर से रगड़कर आग के रूप में प्रारंभिक ऊर्जा उत्पन्न की थी। आग के आविष्कार के बाद पवन और जल ऊर्जा का दोहन आदिमानव की विकास-यात्रा के मील के पत्थर बने। इन ऊर्जा स्रोतों से उसने मुख्यतः पवनचक्कियों को चलाकर उनसे अनाज पीसने या पानी खींचने का काम लिया। सूखी पत्तियों, कृषि अपशिष्टों आदि जैव पदार्थों को जलाकर भी मानव ने ऊर्जा प्राप्त की। पाषाण-युग से लेकर ताम्र युग, लौह युग तथा आधुनिक युग तक आते-आते मानव द्वारा नए-नए उन्नत ऊर्जा स्रोतों की खोज हुई।

किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक तथा औद्योगिक विकास के लिए ऊर्जा का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। ऊर्जा की प्रति व्यक्ति खपत किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सूचक है। औद्योगीकरण तथा जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप ऊर्जा के उपलब्ध पारंपरिक स्रोतों पर बड़ा दबाव पड़ा है। साथ-साथ बढ़ते शहरीकरण के कारण लोगों के जीवन स्तर में भी तेजी से सुधार हुआ है। उनके लिए आवश्यक साधन, जिनमें यातायात के साधन भी शामिल हैं, तथा नई-नई उपभोक्ता वस्तुएँ जुटाने के लिए भी ऊर्जा की खपत में लगातार वृद्ध होती रही है। इसके फलस्वरूप संपूर्ण विश्व में ऊर्जा संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई है। साथ ही पर्यावरण प्रदूषण की समस्या भी गंभीर हुई है।

ऊर्जा के उत्पादन तथा उसके दोहन की प्रक्रिया अम्ल-वर्षा तथा धरती गरमाने-जैसी पर्यावरणी समस्याओं का कारण बनती है। धरती के गरमाने के लिए कार्बन डाइ-ऑक्साइड, मेथेन, नाइट्रोजन के ऑक्साइड आदि ग्रीन हाउस गैसें जिम्मेदार हैं। कोयला, पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस से उत्पन्न ऊर्जा का इस्तेमाल घरों, उद्योगों, यातायात तथा कृषि आदि कार्यों में व्यापक रूप से होता है। इन जीवाश्म ईंधनों के जलने से कार्बन डाइ-ऑक्साइड गैस बड़ी मात्रा में उत्सर्जित होकर वातावरण में जा मिलती है। कोयले के खनन तथा तेल और प्राकृतिक गैस को प्राप्त करने की प्रक्रिया में भी थोड़ी मात्रा में मेथेन वायुमंडल में पहुँचती है। उल्लेखनीय है कि परमाणु-ऊर्जा, सौर ऊर्जा, जल-विद्युत् ऊर्जा, पवन-ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा तथा भूतापीय ऊर्जा आदि के इस्तेमाल से वायुमंडल में कार्बन डाइ-ऑक्साइड नहीं पहुँचती है, जबकि जैव पदार्थों से प्राप्त जैव ऊर्जा भी कार्बन डाइ-ऑक्साइड के उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार है। इस प्रकार ऊर्जा के उत्पादन और उपभोग दोनों से ही पर्यावरणी प्रदूषण को बढ़ावा मिल रहा है। इन परिस्थितियों में ऊर्जा संरक्षण की बात करना और उसके लिए उपयुक्त उपाय करना न केवल समय की मांग है बल्कि सतत विकास तथा हमारे प्रगतिशील भविष्य के लिए भी आवश्यक है।

ऊर्जा की मांग मुख्यतः तीन कारकों पर निर्भर करती है - आर्थिक वृद्धि, औद्योगीकरण की गति तथा ऊर्जा-नीति। इस शताब्दी के मध्य तक कोयला ऊर्जा का प्रमुख साधन रहा है, जबकि पेट्रोलियम तेल का उपयोग इसकी प्रथम खोज के पचास वर्ष बाद तक भी सिर्फ रोशनी और स्नेहक (तेल) के लिए सीमित रहा। कालांतर में पेट्रोलियम के बड़े स्रोत उपलब्ध होने पर इसका उपयोग पारंपरिक ऊर्जा-साधनों की जगह विभिन्न क्षेत्रों में विस्तृत रूप से होने लगा और इस तरह एक "द्रव ईंधन क्रांति" आई। तेल के साथ ही प्राकृतिक गैस विभिन्न क्षेत्रों में उपयोगी होने के कारण ईंधन और कच्चा माल के उत्तम स्रोत के रूप में उभरकर सामने आई।

किसी भी देश में कुल औद्योगिक और घरेलू ऊर्जा की आवश्यकता का अनुमान देश में उत्पादित ऊर्जा, आयातित ऊर्जा, जनसंख्या और उपयोग की क्षमता

पर निर्भर है। इस अनुमान में प्रत्याशित या अप्रत्याशित अंतर तीन मुख्य कारणों से होते हैं। राजनीतिक कारणों (युद्ध सीमित राष्ट्रीय नीतियों इत्यादि) से ऊर्जा की अतिरिक्त खपत या उत्पादन में गिरावट (जैसे-मध्य एशिया में युद्ध के कारण विश्वव्यापी ऊर्जा-संकट), ऊर्जा संबंधी तकनीक में परिवर्तन के कारण एक ईंधन की जगह दूसरे का चलन तथा आर्थिक उथल-पुथल व मूल्यों में वृद्धि के कारण ऊर्जा प्रणाली में परिवर्तन। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि ऊर्जा प्रणाली परिवर्तनीय है और इसमें ऐसे नए स्वरूप स्वीकार किए जाते हैं जिनसे उद्योग और जनसाधारण को समुचित मात्रा में न्यूनतम मूल्य पर वांछित ईंधन, चुनाव की अधिकतम स्वतंत्रता देते हुए, मिल सके।

जीवाश्म ईंधनों का इस्तेमाल काफी समय से हो रहा है। लेकिन इनके सीमित भंडारों तथा ऊर्जा के लगातार महंगे होते जाने से ऊर्जा संरक्षण की आज हमें और भी अधिक आवश्यकता है। तेल के बढ़ते मूल्यों के कारण विदेशी मुद्रा-कोष पर भी अतिरिक्त भार पड़ा है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि नवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक ऊर्जा के आयात पर हमारा कुल राष्ट्रीय व्यय 20 लाख अरब अमेरिकी डॉलर के लगभग होने की संभावना है। इसको ध्यान में रखते हुए ऊर्जा की बचत अनिवार्य है जो पर्यावरण के हित में भी है। नवीकरणीय ऊर्जा-स्रोतों के विकास के कार्यक्रम भी चल रहे हैं। इन स्रोतों से ऊर्जा के दोहन के लिए नित नई प्रौद्योगिकियों का विकास किया जा रहा है। किंतु इसके लिए धन के अलावा समय की भी आवश्यकता है। अतः जब तक ऊर्जा के वैकल्पिक संसाधन उपलब्ध नहीं हो जाते, तब तक ऊर्जा के परंपरागत और अनवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को ही सावधानीपूर्वक तथा मितव्ययिता के साथ हमें उपयोग करना चाहिए ताकि अधिक से अधिक समय तक उनसे ऊर्जा का दोहन किया जा सके।

दुर्गा प्रसाद मिश्र

संपादक

विषय - सूची

	पृष्ठ संख्या
अध्याय 1. ऊर्जा क्या है ?	1
अध्याय 2. ऊर्जा के साधन	8
अध्याय 3. ऊर्जा के विकल्प की आवश्यकता क्यों ?	13
अध्याय 4. सौर ऊर्जा	27
अध्याय 5. बायोगैस ऊर्जा	38
अध्याय 6. बायोमास ऊर्जा	53
अध्याय 7. पवन-ऊर्जा	70
अध्याय 8. ऊर्जा के अन्य स्रोत -- तापीय ऊर्जा, समुद्री ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, परमाणु ऊर्जा, हाइड्रोजन ऊर्जा	75
अध्याय 9. ऊर्जा-संरक्षण के महत्वपूर्ण पहलू	96
अध्याय 10. उपसंहार	113
परिशिष्ट :	
(क) उपयोगी सारणियाँ	118
(ख) संदर्भ	130
(ग) पारिभाषिक शब्दावली (हिंदी-अंग्रेजी)	131
(घ) पारिभाषिक शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)	134

1

ऊर्जा क्या है?

यह सभी जानते हैं कि भोजन से हमें शक्ति (ऊर्जा) प्राप्त होती है जिससे हम कार्य करते हैं। लकड़ी के दहन से ऊर्जा प्राप्त होती है जिससे खाना बनता है, पेट्रोल से प्राप्त ऊष्मीय ऊर्जा से कार तथा मोटरगाड़ियाँ चलती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी भी कार्य को करने के लिए शक्ति की आवश्यकता होती है और यही शक्ति ऊर्जा कहलाती है। आदिकाल से मानव ऊर्जा के सौर स्रोतों के बाद परमाणु-स्रोतों का पता लगाकर इनसे ऊर्जा प्राप्त करता आ रहा है।

ऊर्जा के विभिन्न रूप

ऊर्जा के निम्नलिखित विभिन्न रूप हैं -

1. यांत्रिक ऊर्जा
2. ऊष्मीय ऊर्जा
3. प्रकाशीय ऊर्जा
4. ध्वनि ऊर्जा
5. वैद्युत ऊर्जा
6. रासायनिक ऊर्जा
7. नाभिकीय ऊर्जा

प्रत्येक प्रकार की ऊर्जा का एक दूसरे में रूपांतरण किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, वैद्युत ऊर्जा का ऊष्मीय ऊर्जा में रूपांतरण विद्युत् हीटर में होता है तथा विद्युत् बल्ब के द्वारा वैद्युत ऊर्जा को प्रकाशीय ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है।

ऊर्जा के स्रोत

ऊर्जा के प्रमुख स्रोत इस प्रकार हैं -

1. परंपरागत स्रोत

प्राकृतिक गैस, तेल, पेट्रोल, कोयला आदि।

2. अपरंपरागत स्रोत

सूर्य, वायु, जल, समुद्र, बायोगैस, बायोमास आदि।

सभी जानते हैं कि पर्यावरण प्रदूषण की समस्या ऊर्जा के प्राकृतिक संसाधनों में हस्तक्षेप के कारण उत्पन्न हुई है। कोयले तथा पेट्रोल के अत्यधिक उपयोग से वायु प्रदूषण, उद्योगों व कल-कारखानों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों को नदियों तथा सागरों में प्रवाहित करने से जल प्रदूषण और ईंधन के लिए जंगल काटने से स्थल प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हुई है। विश्व की अधिकांश (लगभग 80 प्रतिशत) जनसंख्या घरेलू ऊर्जा के साधन के रूप में लकड़ी का प्रयोग करती है। दूसरी ओर जनसंख्या वृद्धि और शहरीकरण के कारण भी वनों को नष्ट किया जा रहा है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आज विकसित, विकासशील तथा अविकसित देशों में ऊर्जा के स्रोतों का विवेकपूर्ण उपयोग नहीं किया जा रहा है। मुख्य रूप से परंपरागत स्रोतों को उपयोग मे लाया जा रहा है, लेकिन जो सीमित मात्रा में है। अतः ऊर्जा के परंपरागत स्रोतों पर निर्भरता कम करके ऊर्जा के अपरंपरागत स्रोतों से ऊर्जा प्राप्त करने की उन्नत तकनीकों का विकास करना चाहिए। यही समय की मांग है।

ऊर्जा संसाधनों की वर्तमान स्थिति

विश्व की तुलना में भारत के ऊर्जा संसाधन अत्यंत सीमित हैं। वर्तमान प्रौद्योगिकी के बल पर प्राप्त होने वाले कोयले के भंडार लगभग 70 बिलियन टन हैं। भारत में कोयले का वार्षिक उत्पादन वर्तमान दर 253.81 मिलियन टन के स्तर पर अगले 275 वर्षों तक कायम रह सकता है। इसकी तुलना में वर्तमान उत्पादन-दर

पर कच्चा तेल और प्राकृतिक गैस, जिनका भंडार क्रमशः 765 मिलियन टन तथा 707 बिलियन घनमीटर है और जो विश्व के भंडार के एक फीसदी से भी कम हैं, 24 और 37 वर्षों तक ही कायम रहेंगे।

भारत में आर्थिक वृद्धि तथा सभी क्षेत्रों में तेज और गहन क्रियाओं के अनुरूप ऊर्जा की खपत बढ़ी है और अव्यावसायिक स्रोतों के बजाय व्यावसायिक ऊर्जा स्रोतों की ओर रूझान बढ़ा है। भारत में कुल ऊर्जा आपूर्ति 1970-71 में 146.1 मिलियन टन तेल-समतुल्य से बढ़कर 1990-91 में 291 टन हो गई तथा वर्ष 2009-10 मे अनुमानित 405.7 टन होगी। इसमें व्यापारिक ऊर्जा का हिस्सा वर्ष 1955, 1990 तथा 2010 में क्रमशः 26 प्रतिशत, 59 प्रतिशत तथा 75 प्रतिशत है। वर्ष 1993-94 में भारत में कुल प्राथमिक ऊर्जा खपत में कोयले और लिग्नाइट का हिस्सा 62.4 प्रतिशत था, जबकि तेल, प्राकृतिक गैस और जल तथा नाभिकीय ऊर्जा का हिस्सा क्रमशः 27.1 प्रतिशत, 7.5 प्रतिशत तथा 3 प्रतिशत रहा। वर्ष 2009-10 में प्राकृतिक गैस का हिस्सा 11 प्रतिशत हो सकता है जबकि कोयला प्राथमिक ऊर्जा का प्रबल स्रोत होगा। वर्ष 1973 में तेल के अंतर्राष्ट्रीय मूल्य में भारी चढ़ाव आने के बाद भारत ऊर्जा संकट की स्थिति में आ गया और 1979 में दूसरे तेल संकट से स्थिति और भी गंभीर हो गई। तेल आयात में वृद्धि और इसके कारण विदेशी मुद्रा के भारी खर्च के कारण तेल पर निर्भरता कम करने की जरूरत महसूस की गई और तेल की हर बूंद को बचाने तथा नये स्रोतों को ढूंढने की ओर कदम बढ़े। कालांतर में इस चुनौती वाले कार्य को व्यापक स्तर पर अपनाया गया पेट्रोलियम उत्पादों की खपत तेजी से बढ़ी और 1975-76 में 22.45 मिलियन टन से 1994-95 में 65.31 मिलियन टन हो गई, यद्यपि घरेलू कच्चा तेल उत्पादन 32.23 मिलियन टन तक ही रहा और जो बढ़ती मांग की पूर्ति करने में सर्वथा अपर्याप्त है।

वास्तव में मांग और घरेलू उत्पादन के बीच का अंतर बढ़ते जाने के कारण तेल में हम मात्र 44 प्रतिशत ही आत्मनिर्भर हो पाए हैं। बाकी तेल के आयात हेतु 1994-95 में 17838 करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा लगानी पड़ी। वर्तमान खपत स्तर पर एक बैरल तेल के मूल्य मे एक अमरीकी डॉलर की वृद्धि 700 करोड़ रुपए विदेशी

मुद्रा के समतुल्य है। वर्ष 2000 में देश को 103 मिलियन टन पेट्रोलियम उत्पादों की जरूरत होगी। आशातीत 57 मिलियन टन तेल का घरेलू उत्पादन उपरोक्त जरूरत का आधा भाग ही पूरा कर सकेगा। अतः आगामी वर्षों में ऊर्जा-परिदृश्य में तेल की प्रबल भूमिका रहेगी।

सच कहा जाए तो पेट्रोलियम उत्पादों के लिए विदेशों पर निर्भर रहना हमारे लिए घातक है। 1971 में भारत-पाक युद्ध के दौरान सभी अरब देशों ने भारत को पेट्रोलियम पदार्थ व कच्चा माल देना बंद कर दिया था। इससे भारी संकट का सामना करना पड़ जाता यदि सोवियत रूस से तत्काल पर्याप्त मात्रा में खनिज तेल की आपूर्ति न हुई होती। अक्टूबर, 1973 में ओपेक देशों द्वारा कच्चे तेल के दाम अचानक तीव्र गति से बढ़ाने के कारण विश्व ऊर्जा स्थिति में भी भीषण परिवर्तन हुआ। हमारा देश भी इस परिवर्तन से प्रभावित हुआ और पुनः ऊर्जा संकट के भंवर में फंस गया। विश्व बाजार में खनिज तेल के दाम बढ़ने से हमारे देश की अर्थव्यवस्था पर भारी आर्थिक बोझ पड़ा क्योंकि 1973 में हम कच्चे तेल तथा पेट्रोलियम पदार्थों के आयात पर 333 करोड़ रुपए व्यय करते थे जबकि 1982-83 में हमें 5605 करोड़ रुपए व्यय करने पड़े।

21वीं सदी के लिए जिन विकास कार्यक्रमों के सपने हमने संजोए हैं, क्या पर्याप्त ऊर्जा की उपलब्धि के बिना पूरे हो पाएंगे? यह प्रश्न विचारणीय है। विकास के नाम पर प्रकृति प्रदत्त ऊर्जा स्रोतों को जिस तरह हम समाप्त कर रहे हैं, उसके लिए आने वाली पीढ़ियां हमें क्षमा नहीं करेंगी।

यद्यपि वैज्ञानिक ऊर्जा के नए वैकल्पिक स्रोतों की खोज में निरंतर जुटे हुए हैं और उन्हें सफलता भी प्राप्त हो रही है किंतु फिर भी हमें ऊर्जा संरक्षण के उपायों पर विशेष ध्यान देना होगा।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि आधुनिक जीवन-शैली बिना ऊर्जा के संभव नहीं तथा ऊर्जा के परंपरागत स्रोतों के निरंतर कम होते जाने के कारण ऊर्जा-संकट एक ज्वलंत समस्या है। यदि समय रहते अपरंपरागत अथवा नवीन

स्रोतों की आवश्यकता को नहीं समझा गया तो भविष्य में जीवन बहुत कठिनाई के दौर से गुजरेगा।

आज जीवाश्मी ईंधन, जैसे - कोयला, पेट्रोल आदि के भंडार धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं। दूसरी ओर जनसंख्या की निरंतर वृद्धि और देश की अधिकांश निर्धन जनता के जीवन स्तर में सुधार के लिए आवश्यक औद्योगिक गतिविधियों तथा विकास कार्यों में वृद्धि के कारण ऊर्जा की निरंतर बढ़ती मांग को पूरा करने से ऊर्जा का संकट गंभीर होता जा रहा है।

सच पूछा जाए तो अपरंपरागत अथवा नवीन ऊर्जा-स्रोतों को खोजने का महत्व दो प्रमुख बातों की वजह से है। एक तो, परंपरागत ऊर्जा स्रोतों में दिनोंदिन ह्रास होते जाना और दूसरे इस कारण पर्यावरण पर पड़ने वाला विपरीत प्रभाव। वर्तमान में परंपरागत ऊर्जा स्रोतों की अविवेकपूर्ण दोहन प्रक्रिया से प्रतीत होता है कि यदि ऊर्जा के अन्य वैकल्पिक स्रोत नहीं खोजे गए तो ऊर्जा के समस्त उपलब्ध स्रोत आगामी 100 वर्षों में समाप्त हो जाएंगे। आज प्रमुख ऊर्जा स्रोत पेट्रोलियम की आवश्यकता का 40 प्रतिशत भाग विदेशों से आयात करना पड़ता है। वैसे इतना तेल आयात करने से देश की वित्तीय स्थिति प्रभावित होती है। साथ ही कोयला आदि वर्तमान ऊर्जा-स्रोत पर्यावरण को दिनोंदिन प्रदूषित भी करते जा रहे हैं। इन समस्याओं को देखते हुए वैकल्पिक ऊर्जा साधनों के खोज की आवश्यकता है जिससे सस्ते, सरल तथा प्रदूषण रहित ऊर्जा संसाधन प्राप्त हो सकें। इनमें प्रमुख रूप से सूर्य, पवन, जलीय, जैव संसाधन आदि सम्मिलित हैं।

सूर्य ऊर्जा का अक्षय भंडार है। सौर ऊर्जा पर आधारित आजकल अनेक उपकरण, यथा - सोलर कुकर, सोलर वाटर हीटर, सौर लालटेन इत्यादि उपलब्ध हैं। इसी प्रकार पवन-चक्की से पवन ऊर्जा का उत्पादन और इस्तेमाल हो रहा है। अपरंपरागत ऊर्जा-स्रोतों में एक नाम जैव गैस का भी है। कृषि-अपशिष्ट, शहरी कूड़े-कचरे, जैव द्रव्य और सूक्ष्म जीवों की सहायता से अवायुजीवी उपापचय द्वारा गैस और खाद प्राप्त करने के लिये जैव प्रौद्योगिकी, ताप-अपघटन, किण्वन आदि नई विधियों द्वारा ऊर्जा के संकट को दूर किया जा सकता है। जलकुंभी,

बूचड़खाने के व्यर्थ पदार्थों और मानव मल-मूत्र वाली ऊर्जा को ऊर्जा के नए स्रोतों के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। इसी प्रकार संपीडित प्राकृतिक गैस, जो पेट्रोलियम निष्कर्ष का उप-उत्पाद है, आने वाले कम से कम पचास वर्षों के लिए उपलब्ध एक अत्यंत आकर्षक तथा वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत सिद्ध होगा--यदि इसे वाहनों में प्रयुक्त किया जाएगा। यह गैस पेट्रोल की तुलना में सस्ती भी है। टैक्सियों में इसका प्रयोग करने के लिए मात्र सी.एन.जी. के किट को बदलना होगा। मुंबई महानगर में 40,000 टैक्सियों में से 1400 टैक्सियों में यह विधि अपना भी ली गई है।

ऊर्जा संकट के समाधान में कृषि-वानिकी कार्यक्रम अत्यधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकते हैं। इनसे केवल ग्रामीण क्षेत्रों की घरेलू ऊर्जा की समस्या ही हल नहीं होगी, अपितु पर्यावरण प्रदूषण तथा भूक्षरण समस्या का भी समाधान होगा। वनों में वृक्षों की कटाई पर रोक लगाकर तथा ग्रामीण क्षेत्रों में आस-पास के अनुपयोगी स्थानों में बहु-उद्देशीय वृक्ष-ऊर्जा तथा पशुचारा वाली दोनों समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। इस प्रणाली में ऐसे वृक्ष लगाए जाते हैं जो लकड़ी के साथ-साथ चारे तथा खाद के रूप में काम आने वाली पत्तियां तथा फल उपलब्ध करा सकें। कृषि-वानिकी प्रणाली में कृषि के साथ-साथ अनेक वृक्ष, जैसे-शीशम, बबूल, सहजन, यूकेलिप्टस, नीम इत्यादि लगाए जाते हैं।

ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों में वनस्पतियों से ऊर्जा प्राप्ति का एक ऐसा साधन है जो पर्यावरण को दूषित किए बिना आज की उद्योग प्रधान सभ्यता को बनाए रख सकता है। वैज्ञानिकों को अनेक ऐसे पौधों का पता लगा है, जो प्राप्त सौर ऊर्जा का कुछ भाग हाइड्रोकार्बनों के रूप में संचित करते हैं। यूफोर्बिएसी तथा एस्किलपिएसी कुल के पौधों से प्राप्त रबड़क्षीर (लेटेक्स) में वही हाइड्रोकार्बन बताए गए हैं, जो पेट्रोलियम में पाए जाते हैं। इन सभी पौधों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि ये शुष्क तथा उष्ण प्रदेशों में बिना किसी कठिनाई के प्राकृतिक रूप से परिवर्धित होते हैं। रेगिस्तानों में पेट्रो-पादपों की खेती न केवल ऊर्जा-संकट के समाधान में सहायक होगी, बल्कि इससे रेगिस्तानों के प्रसार को रोकने में भी मदद मिलेगी।

हमारे देश में ऊर्जा-संसाधनों के विकास की गति मध्यम है और साथ ही इनका विवेकशील उपयोग भी नहीं हो पा रहा है। ऊर्जा संरक्षण के उपरांत भी अगले 20 वर्षों की अवधि में तेल की मांग दुगुनी हो जाएगी जबकि कोयला और बिजली की मांग क्रमशः दुगुनी और तिगुनी हो जाएगी। ऊर्जा के अधिकांश स्रोत एक बार चुक जाने के बाद दुबारा नए नहीं किए जा सकते हैं। अतः नवीकरणीय तथा प्रदूषण रहित ऊर्जा स्रोतों की ओर हमें उन्मुख होना ही पड़ेगा। देश के पर्यावरण के साथ-साथ व्यक्तियों के स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए अलग-अलग भौगोलिक परिवेश में व्यावसायिक तथा अव्यावसायिक दोनों स्रोतों का उपयोग और विकास करना होगा।

□

2

ऊर्जा के साधन

मानव के विकास तथा कल्याण के लिए ऊर्जा की भूमिका सर्वविदित है। ऊर्जा की मात्रा के प्रयोग तथा मानव के रहन-सहन के स्तर में सीधा संबंध है अर्थात् प्रति व्यक्ति ऊर्जा की मात्रा के व्यय की वृद्धि के साथ-साथ रहन-सहन में सुधार होता है। चाहे औद्योगिक क्षेत्र हो या कृषि, परिवहन या घरेलू क्षेत्र हो-ऊर्जा की आवश्यकता किसी न किसी रूप में अवश्य पड़ती है।

जहां तक ऊर्जा के साधनों का सवाल है, वे सीमित ही हैं। ऊर्जा के उपलब्ध साधनों को हम मुख्य रूप से दो श्रेणियों में वर्गीकृत कर सकते हैं -

1. परंपरागत/व्यावसायिक साधन,

2. अपरंपरागत साधन/अव्यावसायिक साधन

परंपरागत तथा व्यावसायिक साधन

इस श्रेणी में मुख्य रूप से कोयला, तेल, जल-विद्युत्, प्राकृतिक गैस तथा नाभिकीय ऊर्जा हैं। कोयला, तेल और पेट्रोल ऊर्जा प्राप्ति के अब तक परंपरागत साधन रहे हैं किंतु पृथ्वी पर इनका भंडार अत्यंत सीमित है। संभावना है अगली शताब्दी तक इनका भंडार समाप्त हो जाएगा। भारतीय भूविज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार हमारे पास कोयले का 2000 करोड़ टन का प्रामाणिक भंडार है। इसके अतिरिक्त और भंडारों के मिलने की भी संभावनाएं हैं। औद्योगिकीकरण के उपरांत कोयला ही ऊर्जा का मुख्य साधन रहा है।

हमारे देश में लगभग 8370 करोड़ टन कोयला, 200 करोड़ टन लिग्नाइट, 1950 करोड़ टन कोक कोयला का भंडार है। इस समय यह प्रतिवर्ष 15 करोड़ टन से अधिक व्यय हो रहा है। कोयले का खदान, स्थानांतरण दिन-प्रतिदिन कठिन,

खर्चीला तथा समस्या से युक्त जोखिम भरा कार्य होता जा रहा है। वैसे हमारे देश के कोयले का भंडार लगभग 700 वर्षों के लिये पर्याप्त है किंतु कोयले से प्रदूषण भारी मात्रा में होता है, इसलिए अन्य स्रोतों की खोज और विकास आवश्यक है। पिछले तेल संकट के उत्पन्न होने के पहले जो अधिकांश कार्य कोयले से किये जाते थे, वे तेल से किए जाने लगे क्योंकि तेल से ऊर्जा प्राप्त करना अपेक्षाकृत आसान है। इसके अतिरिक्त कोयले के जलने से कार्बन डाइ-ऑक्साइड तथा कार्बनमोनो-ऑक्साइड उत्पन्न होती हैं जो कि प्रदूषक होने की वजह से पारिस्थितिक संतुलन पर बुरा प्रभाव डालती हैं।

एक अनुमान के अनुसार संपूर्ण ऊर्जा की लगभग आधी ऊर्जा तेल द्वारा उत्पन्न की जाती है। तेल उत्पादक राष्ट्रों द्वारा तेल के मूल्य में वृद्धि के निर्णय से विश्व की अर्थव्यवस्था पर काफी प्रभाव पड़ा है-खासतौर से भारत जैसे विकासशील देश पर। हालांकि अभी विश्व में तेल की कमी नहीं है, किंतु वर्तमान उपभोग-दर के अनुसार तेल-स्रोत कुछ ही वर्षों में रिक्त हो सकते हैं। अतः ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि ऊर्जा के अन्य स्रोतों की खोज कर ली जाए। तभी विकास कार्यों को जारी रखा जा सकता है। हमारे देश में तेल के भंडार अत्यल्प हैं। हमारे देश की कुल आवश्यकता का दो-तिहाई भाग तेल अन्य तेल-उत्पादक देशों से आयातित करना पड़ता है।

जल-विद्युत् साधनों पर विचार करने से पता चलता है कि हमारे देश में जल-विद्युत् की कुल क्षमता का अभी तक केवल एक बहुत छोटे अंश का विकास हो पाया है। इस समय जल से मिल सकने वाली शक्ति अनुमानतः 40,000 मेगावाट है। जल-विद्युत् का विकास और प्रयोग बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। इस समय भारत में 1 लाख मेगावाट बिजली का विकास करने की क्षमता उपलब्ध है। जल-विद्युत् का विकास अधिकांशतः हिमालय की पहाड़ियों में होने की वजह से आर्थिक रूप से प्रयोग और एक स्थान से दूसरे स्थान में ले जाने में अधिक कठिनाई है। इसके अलावा जलशक्ति वाली विधि अभी भी काफी खर्चीली, अधिक समय लेने वाली तथा जटिल विधि है।

नाभिकीय ऊर्जा के संबंध में अभी बहुत सारी समस्याएँ हैं, हालांकि इस ओर अब ध्यान दिया जा रहा है। नाभिकीय रिएक्टर द्वारा उत्पन्न ऊर्जा कार्यक्रम सर्वप्रथम डॉ. होमी जहाँगीर भाभा के निर्देशन में सन् 1950 में तैयार किया गया था। भारत ने नाभिकीय शक्ति-संयंत्रों के निर्माण तथा अभिकल्पना में काफी हद तक आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है किंतु हमारे देश में यूरेनियम के भंडार इतने अधिक नहीं हैं। थोरियम के भंडार पर्याप्त हैं और इन्हीं की उपयोगिता की संभावना है।

2. अपरंपरागत साधन

ऊर्जा के अपारंपरिक स्रोतों में ईंधन के रूप में प्रयुक्त होने वाली लकड़ी गोबर, कृषि-अवशेष, सौर ऊर्जा आदि सम्मिलित हैं। ऊर्जा के अव्यावसायिक स्रोत, जैसे-जलाने की लकड़ी, गोबर, कृषि-अवशेष आदि कुल ऊर्जा आवश्यकता का लगभग 40 प्रतिशत तक की पूर्ति कर रहे हैं, जबकि इनका प्रयोग अवैज्ञानिक ढंग से कम कार्यक्षमता पर होता है और इनसे पर्यावरण प्रदूषण भी होता है। फिर भी परंपरागत (अव्यावसायिक) ऊर्जा-साधन, जो देश में खपत की आधी शक्ति प्रदान करते हैं, काफी महत्वपूर्ण हैं। इस ऊर्जा की अधिकांश मात्रा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रयुक्त की जाती है। भारत की कुल जनसंख्या का 70-80 प्रतिशत भाग गाँवों में ग्रामीण जनता के रूप में है जो कि लकड़ी, कृषि-अवशेष तथा पशु-गोबर जलाकर ऊर्जा उत्पन्न कर अपने दैनिक कार्य चलाते हैं। ग्रामीण समूह की निर्भरता तो अव्यावसायिक साधनों पर भविष्य में भी रहेगी, यद्यपि संपूर्ण ऊर्जा-खपत में कुछ गिरावट, विगत दस वर्षों में, अवश्य आई है। लकड़ी तथा गोबर (कंडे) के उपयोग के साथ-साथ जन-शक्ति तथा पशु-शक्ति का उपयोग यांत्रिक ऊर्जा के रूप में सिंचाई और पीने के पानी की व्यवस्था के लिए होता है।

हम जन-शक्ति को मानव-ऊर्जा तथा पशु-शक्ति को पशु-ऊर्जा की संज्ञा दे सकते हैं। मानव की ऊर्जा, उसकी कार्यक्षमता तथा उपलब्धियों के आधार पर आंकी जाती है, जैसे कि अमेरिकी मजदूर भारत के मजदूर से 100 गुना ज्यादा आय करता है। कारण स्पष्ट है-अमेरिका भारत की तुलना में अधिक विकसित तथा समृद्ध देश है। हमारे यहाँ मजदूरों को काम के बदले उचित मजदूरी न मिल पाने पर

भी वे अधिक काम करते हैं। बच्चे, स्त्री-पुरुष सभी आयु वर्ग के लोग यहाँ मानव ऊर्जा के विकल्प बने हुए हैं। पशु-ऊर्जा के संदर्भ में यह आश्चर्यजनक तथ्य है कि हमारे देश में 10 करोड़ भार खींचने वाले जानवरों से 5 करोड़ हार्स पावर या 40,000 मेगावाट शक्ति का संचय होता है, जो देश में कुल स्थापित थर्मल, पन तथा परमाणु-बिजली की क्षमता से कहीं अधिक है। पशु हमें ऊर्जा उपलब्ध कराने के साथ-साथ गोबर भी देते हैं। एक अनुमान के अनुसार इस गोबर से 1.4 करोड़ किलो लीटर मिट्टी के तेल के बराबर 20 करोड़ टन जैविक खाद, जो देश की वर्तमान रासायनिक खाद की कुल मांग के डेढ़ गुना के बराबर है, ऊर्जा उपलब्ध हो सकती है।

इसके अतिरिक्त निम्न वैकल्पिक (अपरंपरागत) स्रोतों से भी ऊर्जा प्राप्त होती है --

1. सौर ऊर्जा
2. पवन ऊर्जा
3. समुद्र-ऊर्जा (ज्वारीय ऊर्जा)
4. भूतापीय ऊर्जा
5. परमाणु-ऊर्जा (नाभिकीय ऊर्जा)
6. बायोगैस (गोबर गैस) से ऊर्जा
7. हाइड्रोजन-गैस से ऊर्जा

निम्नलिखित सारणी में विभिन्न स्रोतों के इकाई आयतन से मिलने वाली ऊर्जा की तुलना की गई है --

विभिन्न ऊर्जा स्रोतों से प्राप्य ऊर्जा की तुलना

ऊर्जा स्रोत	प्राप्त ऊर्जा कि. व. घं. (किलोवाट घंटा)
यूरेनियम-235 का विखंडन	$4x10^{11}$ प्रति घन मीटर
यूरेनियम की सम्मिलित क्रिया	$1x10^{7}$ प्रति घन मीटर

ऊर्जा स्रोत	प्राप्त ऊर्जा कि. व. घं. (किलोवाट घंटा)
तेल, कोयला व गैस	$1x10^{4}$ प्रति घन मीटर
जल-ऊर्जा (30 मी. दबाव पर)	1 प्रति घन मीटर
सौर ऊर्जा प्रति घंटा	1 प्रति वर्ग मीटर
हवा की ऊर्जा (36 किमी./घंटा)	$5x10^{-1}$ प्रति वर्ग मीटर
भूतपीय ऊर्जा प्रति घंटा	$6x10^{-5}$ प्रति वर्ग मीटर

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि ऊर्जा सघनता की दृष्टि से नाभिकीय ऊर्जा के स्रोत सर्वोत्तम हैं, परंतु नाभिकीय ऊर्जा के संबंध में हमारे देश में अभी बहुत सारी समस्याएँ हैं।

□

3

ऊर्जा के विकल्प की आवश्यकता क्यों?

अतीत काल से ही मानव किसी न किसी रूप में ऊर्जा का उपयोग करता आ रहा है। पहले केवल लकड़ी ही ईंधन के रूप में प्रयुक्त होती थी, परंतु कालांतर में औद्योगिक क्रांति के दौरान कोयला, तेल और गैस की खपत दिनों-दिन बढ़ती गई। जो काम पहले मानव व पशुओं के श्रम से होता था, वह आज ऊर्जा के सहारे होने लगा है। हमारी आवश्यकताएँ भी निरंतर बढ़ती जा रही हैं। विश्व के अधिकांश विकसित और विकासशील देश ऊर्जा की कमी से प्रभावित हो रहे हैं। आज ऊर्जा की मांग और पूर्ति में एक बड़ा अंतर देखने को मिलता है। प्रसिद्ध जनसंख्या गणितज्ञ माल्थस के अनुसार यदि आबादी गुणा के अनुपात में बढ़ती है तो ऊर्जा की खपत समांतर क्रम में बढ़ती है। दस हजार वर्ष ईसा पूर्व पृथ्वी पर सिर्फ दस लाख मानव थे। ईसवी सन् के आरंभ में जनसंख्या साढ़े सत्ताईस करोड़ थी जो बढ़कर आज लगभग तीस खरब हो गई है और सन् 2050 तक 80 खरब से भी अधिक हो सकती है। ईंधन की खपत प्रारंभ की अठारह शताब्दियों में लकड़ी, कोयला, तेल आदि रूपों में 300 अरब टन कोयले के समतुल्य थी। विख्यात विशेषज्ञ पुतनाम के अनुसार संसार के ताप के लिए इस शताब्दी के अंत तक 909 अरब टन कोयले के बराबर ईंधन जलाया गया और अनुमानतः सन् 2050 तक 3200 अरब टन जलाया जाएगा।

कुछ वर्षों से अनुभव किया जा रहा है कि वर्तमान प्रगति के साथ ऊर्जा के स्रोतों में कमी आ रही है और निकट भविष्य में ऊर्जा के स्रोतों की भीषण कमी के कारण हमें भारी संकट का सामना करना पड़ेगा। अनुमान है कि लगभग 70 अरब टन कोयला, 50 अरब टन तेल और इसके एक चौथाई मात्रा में प्राकृतिक गैस का भंडार पृथ्वी में एकत्रित है। ईंधन की वर्तमान खपत-दर से इक्कीसवीं सदी के आरंभ में तेल की अत्यंत कमी हो जाएगी और 21वीं शताब्दी के अंत तक कोयला भी

दुर्लभ हो जाएगा। तेल के विक्रय पर खनिज तेल उत्पादित राष्ट्रों द्वारा लगाए गए प्रतिबंध ने ऊर्जा की समस्या को और भी गंभीर बना दिया है। इस प्रकार सीमित खनिज तेल व कोयले के भंडार वाले राष्ट्रों के सामने ऊर्जा प्राप्ति के अन्य साधनों की आवश्यकता उत्पन्न हो गई है।

ऊर्जा-उपभोग में निरंतर वृद्धि

किसी भी राष्ट्र की आर्थिक प्रगति प्रति व्यक्ति उपभोग की जाने वाली ऊर्जा की दर पर ही निर्भर करती है। भारत में प्रति व्यक्ति होने वाली ऊर्जा की खपत मात्र 243 किलोग्राम तेल तुल्य है। विश्व औसत का यह बहुत कम यानी मात्र 16 प्रतिशत ही है। विकसित राष्ट्रों की तुलना में यह भी काफी कम है। यह अमेरिका की प्रति व्यक्ति खपत का 3 प्रतिशत व जर्मनी का 6 प्रतिशत तथा जापान का मात्र 7 प्रतिशत है।

भारत में ऊर्जा के कुल उपयोग का 60 प्रतिशत व्यावसायिक स्रोतों (कोयला, तेल, गैस, बिजली, जल-विद्युत्, नाभिकीय ऊर्जा आदि) से तथा जंतु उत्सर्जन से प्राप्त होता है। अव्यावसायिक ईंधनों का इस्तेमाल व्यापक रूप से चीनी उद्योगों तथा कई अपंजीकृत घरेलू उद्योगों में होता है। भारत में व्यावसायिक ऊर्जा की खपत में पिछले पांच सालों से 5.5 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से वृद्धि हुई है। हालांकि इससे पूर्व यह वृद्धि दर 3.5 प्रतिशत के लगभग थी।

भारत में प्रति व्यक्ति व्यावसायिक ऊर्जा की खपत 1981 में 99.6 किलोग्राम तेल के तुल्य थी। सन् 1994 तक यह आंकड़ा 243 के मान तक पहुंच गया। इससे स्पष्ट है कि प्रति व्यक्ति व्यावसायिक ऊर्जा की खपत में भारत में धीरे-धीरे बढ़त हुई है। विश्व स्तर पर भारत की प्रति व्यक्ति ऊर्जा-खपत के बहुत कम होने की एक वजह यह भी है कि इस मान को निकालने के लिए अव्यावसायिक स्रोतों से प्राप्त ऊर्जा को परंपरागत रूप से शामिल नहीं किया जाता है। भारत के ग्रामीण अंचलों में अव्यावसायिक ऊर्जा को बड़े व्यापक रूप से काम में लाया जाता है। लेकिन इन अव्यावसायिक स्रोतों से प्राप्त ऊर्जा को भी अगर शामिल कर लिया

जाए तो भी भारत की प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत विकसित तथा औद्योगिक राष्ट्रों की तुलना में काफी कम बैठेगी। यह अलग बात है कि विकसित राष्ट्रों की तुलना में भारत की जनसंख्या के हिसाब से यहां कुल ऊर्जा की खपत कहीं अधिक है।

विशेषज्ञों के अनुसार सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) की इकाई में भारत की कुल व्यावसायिक ऊर्जा की खपत की प्रत्यास्थता नवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक 0.92 हो जाने की संभावना है। अमेरिका में यह केवल 0.343 है जबकि दक्षिण कोरिया में 0.359 तथा जापान में मात्र 0.132 है। प्रति जी.डी.पी. ऊर्जा की खपत को ऊर्जा तीव्रता (एनर्जी इंटेनसिटी) में भी व्यक्त किया जाता है। भारत में ऊर्जा खपत को देखते हुए यहां ऊर्जा संरक्षण के मामले में काफी गुंजाइश है। इस दिशा में न केवल चालू ऊर्जा संरक्षण उपायों को जारी रखते हुए उनके बाकायदा पालन की जरूरत है बल्कि संरक्षण के अभिनव उपायों तथा तरीकों के अनुसंधान-विकास के लिए भी हमें सतत प्रयत्नशील रहना होगा।

हमें विभिन्न मांगों को पूरा करने के लिए ऊर्जा की जरूरत पड़ती है। व्यावसायिक ऊर्जा का वर्गीकरण प्राथमिक तथा द्वितीयक ऊर्जा के रूप में किया जाता है। जीवाश्मी ईंधन, जैसे-कोयला, पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों, जैसे- सौर, पवन, ज्वारीय ऊर्जा स्रोतों आदि को प्राथमिक ऊर्जा देने वाले स्रोतों की संज्ञा दी जाती है। प्राथमिक ऊर्जा स्रोतों के उपयोग से प्राप्त ऊर्जा (जैसे बिजली) को द्वितीयक ऊर्जा कहते हैं। हमारे देश की संपूर्ण ऊर्जा खपत का लगभग 60 प्रतिशत भाग हमें प्राथमिक ऊर्जा-स्रोत-कोयले से ही प्राप्त होता है। कोयले के बाद दूसरा नम्बर हाइड्रोकार्बन तेल यानी पेट्रोलियम का है।

ऊर्जा खपत के चार महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं : उद्योग, कृषि, यातायात तथा घरेलू क्षेत्र। इन क्षेत्रों में होने वाली व्यावसायिक ऊर्जा की खपत की प्रतिशतता को दर्शाया गया है। जैसा कि स्पष्ट है औद्योगिक क्षेत्र में ही व्यावसायिक ऊर्जा की सर्वाधिक खपत होती है, मगर भविष्य में ऊर्जा संरक्षण के गुणात्मक कदम उठाने के कारण इस खपत के कम हो जाने की गुंजाइश है। लेकिन कृषि क्षेत्र में इसके कम

होने तथा घरेलू क्षेत्र में इसके काफी बढ़ जाने का अनुमान है। अव्यावसायिक ऊर्जा स्रोतों को त्याग कर व्यावसायिक ऊर्जा स्रोतो को अपनाने की दिन-ब-दिन बढ़ती प्रवृत्ति, जिसके लिए शहरीकरण तथा जीवन-स्तर में सुधार मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं, के कारण ही घरेलू क्षेत्र में ऊर्जा की खपत में बढ़ोत्तरी होने का अनुमान है। उल्लेखनीय है कि पिछली जनसंख्या रिपोर्ट के अनुसार शहरीकरण का स्तर 1971 में 19.9 प्रतिशत था, वह 1991 तक बढ़ते-बढ़ते 25.1 प्रतिशत हो गया।

दुनिया में शक्ति-स्रोतों की समाप्ति का समय

शक्ति स्रोत	समाप्ति का समय (वर्षों में)
तेल व गैस	20-25 वर्ष
कोयला	100 वर्ष
यूरेनियम-235	25-30 वर्ष
यूरेनियम-238 तथा थोरियम-232	300-500 वर्ष
ड्यूटीरियम	10^6 वर्ष
सूर्य ताप	10^6 वर्ष

बिजली का उत्पादन व बढ़ती जनसंख्या

निःसंदेह विद्युत्-ऊर्जा का प्रमुख और लोकप्रिय साधन है। भारत सरकार पांचवीं पंचवर्षीय योजना से लेकर अब तक देश के कुल आयोजना निवेश की 27 से 30 प्रतिशत पूंजी केवल ऊर्जा उत्पादन-विद्युत, कोयला और पेट्रोलियम पदार्थों पर खर्च कर रही है। फिर भी हर योजना के साथ बिजली की कमी देखने को मिल रही है और औद्योगिकीकरण में निरंतर वृद्धि और बेहतर जीवन-स्तर के फलस्वरूप विद्युत् की मांग उत्पादन के अनुपात में बढ़ती ही जा रही है।

स्वतंत्रता के समय देश में केवल 1360 मेगावाट बिजली उत्पादन की क्षमता थी, जो छठीं योजना के अंत तक बढ़कर 42,440 मेगावाट हो गई। सातवीं योजना समाप्त होने तक बिजली की उत्पादन क्षमता 66,000 मेगावाट हो गई। इसके

बावजूद मांग के अनुपात में बिजली की उपलब्धि कम ही रही। सामान्यतया लगभग 10,000 मेंगावाट बिजली की कमी हमेशा बनी रहती है।

एक अनुमान के अनुसार - एक मेगावाट बिजली बनाने, उसे जरूरत वाले इलाके में भेजने तथा वितरण पर करीब दो करोड़ रुपए खर्च आता हैं अनुमान है कि इस शताब्दी के अंत तक बिजली की जरूरत को पूरा करने के लिए हमें वर्तमान क्षमता में लगभग 58,000 मेगावाट की उत्पादन क्षमता जोड़नी होगी, जिसका अर्थ है कि हमें बिजली उत्पादन पर तब तक 115,000 करोड़ रुपए खर्च करने होंगे। इसके अतिरिक्त, बिजली बनाने के लिए कोयले की आवश्यकता है। इतनी बिजली पैदा करने के लिए 58 करोड़ टन कोयले का अतिरिक्त खनन करना होगा। इसके लिए 30,000 करोड़ रुपए की जरूरत पड़ेगी। साथ ही इस कोयले को बिजली-घरों तक पहुँचाने के लिए रेलों को करीब 900 किलोमीटर दूरी के लिए 360 अरब टन माल ढोने की अतिरिक्त क्षमता का विकास करना होगा। 1984-85 में रेलों की कोयला ढोने की जितनी क्षमता थी, उससे यह छह गुनी ज्यादा है। इसके अलावा कम से कम 45,000 करोड़ रुपए के पूँजी निवेश की आवश्यकता होगी।

एक ही विकल्प

इन सब बातों से यह निष्कर्ष निकलता है कि बिजली के स्थान पर ऊर्जा के सस्ते वैकल्पिक स्रोत की खोज करनी होगी। साथ ही बिजली उत्पादन की वर्तमान क्षमता का पूर्ण उपयोग तथा बेहतर उपकरणों के प्रयोग से इसके दुरुपयोग को रोक कर बिजली की अधिकतम बचत करके ही विद्युत् संकट से निजात मिल सकती है।

यह सभी जानते हैं कि हवा, पानी और सूर्य हमारे लिए प्रकृति प्रदत्त ऊर्जा के मूल स्रोतों के रूप में वरदान हैं। तकनीकी विकास के द्वारा इन्हें ऊर्जा के सरल और सर्वसुलभ साधन का रूप दिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त समुद्री ज्वार, भूगर्भीय ऊर्जा, जैविक ऊर्जा भी ऐसे स्रोत हैं जिनके द्वारा ऊर्जा समस्या का समाधान खोजा जा सकता है। हमारे देश में विद्युत् ऊर्जा तथा परमाणु-ऊर्जा के साथ-साथ अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत विद्युत् ऊर्जा, हाइड्रोजन ऊर्जा, वायु ऊर्जा, जैव

ऊर्जा, समुद्री ज्वार ऊर्जा तथा भूगर्भीय ऊर्जा की दिशा में आवश्यक प्रयास किए जा रहे हैं और भविष्य में इनसे ऊर्जा संकट के प्रति संतोषजनक परिणाम प्राप्त होने की संभावना है।

विभिन्न ऊर्जा-स्रोतों से प्राप्त ऊर्जा उपयोग

(किलोमीटर/घंटा/वर्ष)

ऊर्जा प्रकार	1981 ई. में	2000 ई. में
सौर	2 से $3x10^9$	2 से $5x10^{12}$
भूऊष्मीय	$55x10^9$	1 से $5x10^{12}$
पवन	$2x10^9$	1 से $5x10^{12}$
ज्वार-भाटा	$0.4x10^9$	30 से $60x10^9$
तरंग	0	$10x10^9$
बायोमास	550 से $700x10^9$	$2.5x10^{12}$
लकड़ी	10 से $12x10^{12}$	15 से $20x10^{12}$
लकड़ी का कोयला	$1x10^{12}$	2 से $5x10^{12}$
पीट	$20x10^9$	$1x10^{12}$
पशु	($30x10^9$ भारत में)	$1x10^{12}$
जल-शक्ति	$1.5x10^{12}$	$3x10^{12}$

गाँवों में ऊर्जा की खपत

गाँवों में विभिन्न प्रकार की ऊर्जा की खपत का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि कुल खपत का अव्यावसायिक ऊर्जा 65 प्रतिशत, मानवीय तथा पाशविक ऊर्जा 15 प्रतिशत तथा व्यावसायिक ऊर्जा का 20 प्रतिशत अंशदान है। इस खपत में कार्य वरीयता को ध्यान में रखने पर स्पष्ट हो जाता है कि कुल खपत का 64 प्रतिशत भोजन पकाने, 22 प्रतिशत कृषि, 7 प्रतिशत ग्रामीण उद्योग, 4 प्रतिशत प्रकाश, 3 प्रतिशत परिवहन आदि में खर्च होता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में लकड़ी ऊर्जा का महत्वपूर्ण (68.5 प्रतिशत) स्रोत है। इसके बाद क्रम में तेल उत्पाद (16.9 प्रतिशत), गोबर (8.3 प्रतिशत) तथा अन्य साधन (3.4 प्रतिशत) आते हैं। पेट्रोल, मिट्टी के तेल की व्यापक कमी तथा इनके लगातार बढ़ते मूल्यों और हमारे दिनों-दिन घटते जीवाश्म ईंधन ने ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों-सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा तथा जैव ऊर्जा आदि को अधिक महत्ता प्रदान की है। सौभाग्यवश सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा तथा जैव ऊर्जा आदि देश में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। निम्नलिखित सारणी में ग्रामीण भारत में ऊर्जा का उपयोग दिखाया गया है-

ग्रामीण भारत में ऊर्जा का उपयोग

क्रमांक	कार्य	ऊर्जा स्रोत विकल्प	साधन
1.	खाना पकाना	उपले, कृषि अपशिष्ट लकड़ी, मिट्टी का तेल बायोगैस, सौर ऊर्जा, कोयला।	उन्नत प्रकार के स्टोव चूल्हे, बायोगैस बर्नर, सौर-कुकर।
2.	पानी गर्म करना	विद्युत् सौर ऊर्जा	इमरशन रॉड, सौर जल तापक।
3.	प्रकाश	मिट्टी का तेल बिजली, बायोगैस सौर ऊर्जा।	लालटेन,बल्ब, मैंटल, सौर प्रकाश वोल्टीय प्रणालियां।
4.	जल पंपन	लकड़ी, डीज़ल, बिजली, सौर ऊर्जा, पवन-ऊर्जा	गैसीफायर मोटर, डीज़ल इंजन, सौर पंप, पवन चक्की।

क्रमांक	कार्य	ऊर्जा स्रोत विकल्प	साधन
5.	गहाई से धुनाई के लिए स्थायी भूमि तैयार करने तथा यातायात के लिए चल शक्ति।	डीज़ल, बिजली, पशु शक्ति डीज़ल।	डीज़ल (प्रेशर) बिजली, ट्रैक्टर, पशु

वैकल्पिक ऊर्जा-स्रोतों पर आधारित कुछ संयंत्र

ऊर्जा के प्रचलित स्रोत, जैसे-कोयला, लकड़ी, पेट्रोल, विद्युत, मिट्टी का तेल, प्राकृतिक गैस बहुत सीमित मात्रा में ही उपलब्ध हैं। ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत, जैसे-सौर ऊर्जा, पवन-ऊर्जा, बायोगैस ऊर्जा तथा जल विद्युत् ऊर्जा आदि असीमित मात्रा में उपलब्ध हैं। इन वैकल्पिक स्रोतों पर आधारित कई संयंत्र बनाए गए हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है -

सोलर कुकर

यह भोजन पकाने के काम आता है। इसमें दाल, सब्जी, चावल आदि 2 से 2-1/2 घंटे में आसानी से पक जाते हैं। सोलर कुकर केवल धूप की सहायता से 5-6 लोगों का खाना आसानी से बना सकता है। इसमें खाना पकाने पर ईंधन का खर्च नहीं आता है।

सोलर स्टिल

इस संयंत्र के द्वारा स्वच्छ जल प्राप्त किया जाता है, जो कि बैट्री में प्रयुक्त किया जाता है। इस संयंत्र के द्वारा 2 से 2.5 लीटर शुद्ध जल प्रतिदिन प्राप्त होता है। इसके लिए किसी अन्य प्रकार की ऊर्जा की आवश्यकता नहीं होती है। यह पूर्णतः सौर ऊर्जा से कार्य करता है तथा इसके किसी विशेष रख-रखाव की आवश्यकता नहीं होती है।

सोलर स्ट्रीट लाइट

यह संयंत्र सोलर फोटो वोल्टाइक पैनल द्वारा चालित होता है। इसमें 29 वाट की ट्यूब लाइट प्रकाशित की जाती है। इस संयंत्र को उन ग्रामों में स्थापित किया जाता है, जहां विद्युत् उपलब्ध नहीं है। इस संयंत्र से ग्रामों में मार्ग के प्रकाश की व्यवस्था की जाती है। इसकी लागत 14,000 रुपए है।

एरोजेनरेटर

यह उन स्थानों के लिए उपयुक्त है जहां पर हवा की गति 9 किलोमीटर प्रति घंटा अथवा उससे अधिक होती है। एक सामान्य ऐरोजेनरेटर एक से दो किलोवाट का होता है। ऐरोजेनरेटर वायु के वेग से चलता है और इससे उत्पन्न करेन्ट को स्टोरेज बैटरियों में संचित कर लिया जाता है, जिसे बाद में आवश्यकतानुसार ट्यूबवेल चलाने अथवा अन्य कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। दो किलोवाट का जेनरेटर अनुमानतः लगभग 2,00,000 रुपये का होता है। इस पर कोई अनुदान देय नहीं है। बिना चार्ज हुए यह बैटरी सामान्यतः एक हफ्ते तक ट्यूब लाइट को प्रकाशित करने के लिए सक्षम है। अतः यदि एक-दो दिन हवा की गति मंद भी है, तब भी ऐरोजेनरेटर से प्रकाश होगा और ट्यूब को पर्याप्त बिजली मिलती रहेगी। ऐरोजेनरेटर 1 किलोवाट से अधिक क्षमता में उपलब्ध होता है।

पवन-चक्की

पवन चक्की का प्रयोग सिंचाई अथवा सामुदायिक पेय जल की व्यवस्था हेतु किया जाता है। पवन-चक्की किसी भी स्थान पर कुएं अथवा बोरिंग पर स्थापित की जाती है। पवन-चक्की औसतन 4 से 6 एकड़ तक भूमि की सिंचाई अथवा 1,500 जनसंख्या हेतु पेय जल की व्यवस्था के लिए उपयोगी है। चूंकि पवन-चक्की हवा से चलती है, अतः इसमें बिजली अथवा डीजल का कोई खर्च नहीं आता है और यह डीजल पम्प से भी सस्ती पड़ती है। इस संयंत्र की कुल लागत लगभग रु. 13,500 है।

सोलर वाटर हीटर

इसके द्वारा घरेलू उपयोग हेतु पानी बिना ईंधन अथवा विद्युत् गरम किया जाता है। इस संयंत्र को जहां धूप आती हो, ऐसे स्थान पर दक्षिण दिशा में स्थापित किया जाता है। इस संयंत्र से 60 डिग्री से. तक गरम पानी प्राप्त होता है। 100 लि. प्रतिदिन क्षमता का सोलर हीटर लगभग रु. 8,000/- से रु. 10,000/- मूल्य का होता है, जिस पर अधिकतम रु. 5200/- का अनुदान देय है।

सोलर पम्प

इस संयंत्र में सोलर फोटो-वोल्टाइक सेल द्वारा धूप से बिजली पैदा करके आधा हार्स पावर का पंप चलाया जाता है। यह दो से ढाई हेक्टेयर भूमि की सिंचाई अथवा पेयजल हेतु बीस से पच्चीस हजार ली. प्रतिदिन तक जल उपलब्ध कराने में सक्षम है। संयंत्र की लागत रु. 45,000 है, परंतु विभिन्न श्रेणी के लाभार्थियों को अनुदान के पश्चात् लगभग 8,000 रु. तक के मूल्य पर उपलब्ध है।

सोलर टी.वी.

सौर ऊर्जा चालित टेलीविजन उन सुदूर ग्रामों में स्थापित किये जाते हैं, जहां बिजली उपलब्ध नहीं है तथा शहरों से काफी दूर हैं। सौर टी.वी. संयंत्र मुख्यतः सामुदायिक प्रयोग के लिए स्थापित किये जाते हैं। इसकी कुल लागत रु. 12,000/- है।

सोलर फोटो-वोल्टाइक पावर प्लान्ट

इस संयंत्र में धूप के प्रकाश को पी.वी. चैनल द्वारा विद्युत् में परिवर्तित करके विद्युत् को बैटरी में संचित कर लिया जाता है और आवश्यकतानुसार गांवों में विभिन्न कार्यों के लिए संचित बिजली का प्रयोग किया जाता है। 2 किलोवाट क्षमता के पी.वी. पावर प्लान्ट से 20 वाट के 16 पथ स्तंभों तथा 22 घरेलू ट्यूब लाइट को प्रत्येक रात 6.6 घंटे तक प्रकाशमान किया जा सकता है और इसके अलावा कम्युनिटी सेन्टर (सामुदायिक केन्द्र) में स्थापित एक रंगीन टेलीविजन और एक पंखा भी चलाया जा सकता है।

एक किलोवाट फोटो-वोल्टाइक पावर प्लान्ट की कीमत लगभग 1.50 लाख रुपए होती है। यह संयंत्र केवल उन्हीं गांवों में स्थापित किया जाता है जहां पर नियमित विद्युत् आपूर्ति 5 किलोमीटर अथवा उससे अधिक दूरी पर हो। शुष्क क्षेत्र में सौर तथा पवन-ऊर्जा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है। इस प्रदूषण रहित और कभी खत्म न होने वाली वाली सौर ऊर्जा का उपयोग करने के लिए केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, काजरी (जोधपुर) में विभिन्न प्रकार के घरेलू, खेती और उद्योगों में काम आने वाले सौर उपकरणों के विकास हेतु शोध कार्य किया जा रहा है। सौर संयंत्र, जैसे-सौर मोमबत्ती, मशीन, सौर आसवन यंत्र, सौर जल-तापक, सौर शुष्कक, सौर चूल्हा, बहुउद्देशीय सौर यंत्र इत्यादि बनाए गए हैं। इसके अतिरिक्त सोलर फोटोवोल्टाइक सिस्टम के कुछ यंत्र, जैसे-पौधों में दवाई छिड़कने के लिए सोलर स्प्रेयर और सोलर डस्टर भी बनाए गए हैं। इसी प्रकार से पवन-ऊर्जा का आकलन करने, इस उपयोग हेतु पवन-चक्कियों का निर्माण किया गया है।

सौर मोमबत्ती मशीन से गर्मियों में औसतन 10-16 किलोग्राम और सर्दियों में 6-9 कि.ग्रा. मोम को पिघलाकर मोमबत्ती बनाई जा सकती है। इस मशीन का उपयोग करने से मुख्य लाभ यह है कि पिघलते समय मोम का वाष्पीकरण नहीं होता और इस कार्य में देखरेख के लिए व्यक्ति को पास में खड़े रहने की जरूरत नहीं पड़ती है। यह मशीन किसानों, बेरोजगारों, गांवों की महिलाओं और विकलांगों के लिए धन कमाने के लिए लाभदायक है। इस मशीन का मूल्य 9000/- रुपए है जबकि मोमबत्ती बनाने के सांचे का मूल्य इसके अतिरिक्त है। इस संस्थान में सौर ऊर्जा से आसुत जल प्राप्त करने के लिए सीढ़ीनुमा सौर आसवन-संयंत्र बनाया गया है। इसकी एक विशेषता यह है कि यह उन्नत आसवन संयंत्र बाजार में उपलब्ध समान क्षेत्रफल वाले साधारण आसवन-यंत्र की अपेक्षा सर्दियों में करीब दो से तीन गुना अधिक आसुत जल देता है। इस संयंत्र से आसुत जल का उत्पादन 3 से 4 लीटर प्रति वर्गमीटर प्रतिदिन होता है। इसका आकार आसुत जल की खपत के अनुसार रखा जा सकता है। इस उपकरण से एक लीटर उत्पादित आसुत जल का मूल्य लगभग 70-80 पैसे आता है जबकि बाजार में एक लीटर आसुत जल का मूल्य 4/- रुपये है। आसुत जल का उपयोग ट्रैक्टर, विद्युत् ग्रिड स्टेशन, ट्रेनों में लगी बैटरियों

में किया जाता है। खुले वातावरण में फल व सब्जियों को सुखाने पर धूल, वर्षा व पक्षियों से नुकसान होता है। इस समस्या का हल करने के लिए काजरी में सौर शुष्कक का विकास किया गया है। इस संयंत्र में धनिया, हरी मिर्च, पालक, भिंडी, टमाटर, मेथी, प्याज, गाजर, फूल गोभी, पत्ती गोभी, बथुआ, लौकी, शकरकंद, इमली इत्यादि सुखाने के सफल प्रयोग किए गए हैं। इसमें 100 कि.ग्रा. सब्जी चार दिनों में सूख जाती है। इसमें सूखे हुए पदार्थों से कुछ "इन्सटेन्ट प्रोडक्ट" भी बनाए गए हैं, जैसे-धनिया की चटनी, टमाटर की चटनी इत्यादि। काजरी में एक घरेलू सौर शुष्कक भी बनाया गया है। सूखे फल व सब्जियों के व्यवसायीकरण को राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय व्यापारिक पद्धति से जोड़कर आमदनी प्राप्त की जा सकती है तथा इस संयंत्र की कीमत आठ महीनों में वसूल की जा सकती है। इन सूखी सब्जियों को गृहणियाँ घरों में रख सकती हैं व जरूरत पड़ने पर विभिन्न प्रकार की इन्सटेन्ट चटनियां व इन्सटेन्ट सूप भी तैयार कर सकती हैं। इससे श्रम व समय की बचत हो सकती है। यह सौर शुष्कक गृहणियों के लिए वरदान है।

बाजार में साधारणतया एक दर्पण वाला चूल्हा उपलब्ध है। इस सौर चूल्हे में मुख्य कठिनाई यह है कि इसको प्रत्येक 25-30 मिनट बाद सूर्य की ओर घुमाना पड़ता है। इस समस्या को हल करने के लिए दो दर्पण वाले उन्नत सौर चूल्हे का विकास किया गया है। इस सौर चूल्हे को तीन घंटे तक सूर्य की ओर घुमाने की आवश्यकता नहीं होती है। इसके अलावा एक स्थिर सौर चूल्हा भी बनाया गया है। इस सौर चूल्हे से सर्दियों में भी दोनों वक्त का खाना तैयार कर सकते हैं और वो भी सूर्य की तरफ बिना घुमाए हुए। इस प्रकार के सौर चूल्हों में ज्यादातर उबालने, भूनने व सेंकने वाली खाद्य-सामग्री तैयार की जा सकती है। एक बड़े आकार के सौर चूल्हे को भी बनाया गया है जिससे 80 व्यक्तियों का खाना तैयार कर सकते हैं। इसका उपयोग कैन्टीनों, में कई व्यक्तियों का खाना तैयार करने के लिए भी किया जा सकता है तथा मिलिट्री भोजनालयों, मंदिरों, छात्रावासों इत्यादि में भी हो सकता है। गाँवों में पशु-आहार के लिए बड़े पैमाने पर लकड़ी व गोबर को जलाया जाता है। इस पशु-आहार को तैयार करने के लिए एक सौर चूल्हे का विकास किया गया है। इस चूल्हे को बनाने के लिए मिट्टी, गोबर, बाजरा या गेहूं का भूसा, कांच,

लकड़ी व लोहे की चद्दर की जरूरत होती है। इस सौर चूल्हे में प्रतिदिन 10 कि. ग्रा. पशु-आहार उबाल सकते हैं, जो दिन में 3 बजे तक तैयार हो जाता है। लगभग यही समय पशुओं को आहार देने का होता है।

काजरी में पानी गर्म करने के लिए सौर जल-तापक बनाया गया है। इस संयंत्र से सर्दियों में 100 लीटर पानी शाम तक 55-56 डिग्री तक गर्म हो जाता है। रात को इसको ढकने से दूसरे दिन सवेरे पानी का तापमान 40-45 डिग्री प्राप्त किया जा सकता है। एक बड़े आकार का सौर यंत्र (जिसकी क्षमता 750 लीटर की है) भी बनाया गया है। इस प्रकार के बड़े सौर ऊष्मक यंत्र, होटलों, संस्थानों, छात्रावासों इत्यादि के लिए उपयोग में आ सकते हैं।

काजरी में सोलर सेल से चलने वाले उपकरण, जैसे-सोलर स्प्रेयर और सोलर डस्टर भी बनाए गए हैं। इन दोनों उपकरणों में सोलर सेल के पैनल से सौर ऊर्जा बिजली में परिवर्तित हो जाती है। सोलर स्प्रेयर में उत्पन्न बिजली से एक विद्युत्-मोटर तेजी से चलाई जाती है जो दवा के घोल को बूंदों के फव्वारों में बदल देती है। ये बूंदें पेड़ों की पत्तियों के नीचे व ऊपर पहुँच जाती हैं। इस यंत्र से उत्पन्न बिजली को बैटरी में भी संचित कर सकते हैं। दूसरा यंत्र-सोलर डस्टर-खेतों में कीटनाशक पाउडर छिड़कने के लिए बनाया गया है। इस यंत्र में सोलर सेल से उत्पन्न बिजली एक विशेष प्रकार के बने पंखे को चलाती है जिससे पाउडर हवा के साथ स्वतः तेजी से बाहर निकल आता है और फसल पर छिड़काव हो जाता है।

शुष्क क्षेत्र में सौर ऊर्जा के साथ-साथ पवन-ऊर्जा भी उपलब्ध हैं। पवन-शक्ति की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए इस संस्थान ने शुष्क क्षेत्र के विभिन्न स्थानों, जैसे-जोधपुर, जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर, फ्लोदी के वार्षिक वायु प्रवाह का विश्लेषण किया है। इस विश्लेषण के आधार पर जोधपुर, जैसलमेर, बाड़मेर, फ्लोदी जिलों के कुछ स्थानों को पवन शक्ति के दोहन के लिए उपयुक्त पाया गया, जहां पर पवन-चक्की से कुँओं से पानी खींचा जा सकता है और साथ ही छोटे क्षमता वाले जेनरेटरों से बिजली भी पैदा की जा सकती है।

इस संस्थान में एक परदेदार पवन-चक्की का निर्माण किया गया है। इसके चक्र का व्यास 6.7 मी. है जो कि आगे-पीछे चलने वाले पंप को चलाकर 3.5 मी. गहराई से 1000 से 1200 ली. प्रति घंटे की गति से पानी निकाल सकती है। यह पवन-चक्की 8.5-16 कि.मी. प्रति घंटे वायु गति के प्रवाह में सुरक्षित कार्य करती है। इसके साथ-साथ अपोली 12-पीयू-500 पवन-चक्की की क्षमता का मूल्यांकन कर इस क्षेत्र के लिए उपयोगी पाया गया है। राजस्थान ऊर्जा विकास निगम के अंतर्गत इस क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की पवन-चक्कियां लगाई गई हैं जिनका उपयोग सार्वजनिक स्थानों पर पीने का पानी खींचने व सिंचाई के उपयोग में लाया जा रहा है। इन पवन-चक्कियों की मरम्मत व रखरखाव के लिए इस संस्थान के साथ मिलकर योजना बनाई जा रही है, जिससे भविष्य में इस शक्ति का दोहन करे उसका सुचारू रूप से शुष्क क्षेत्र के विकास में उपयोग किया जा सके।

□

4

सौर - ऊर्जा

निःसंदेह, सूर्य ऊर्जा का प्रधान स्रोत है। यद्यपि ब्रह्मांड में स्थित तारों, आकाशीय पिंडों तथा स्वयं पृथ्वी से ऊर्जा या ऊष्मा की प्राप्ति होती है किंतु यह ऊर्जा सूर्य से प्राप्त की गई ऊर्जा ही होती है। वास्तव में सौर ऊर्जा का भौतिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। वैज्ञानिकों के अनुसार सौर ऊर्जा के अभाव में पृथ्वी तल पर वायु का तापमान केवल -459.6° फा. रहा होता।

सूर्य जिसका व्यास 1,38,24,00 कि.मी. है, पृथ्वी से 14.9 करोड़ कि.मी. दूर है, और इसका द्रव्यमान पृथ्वी से 3,32,000 गुना अधिक है। पृथ्वी का औसत घनत्व 5.52 तथा सूर्य का 1.41 है। वैज्ञानिक गणनानुसार सूर्य तल का औसत तापमान 5700° से. (10300° फा.) अथवा 6000° केल्विन माना जाता है जबकि केंद्रीय भाग का अनुमानित तापमान 1.5-2.0 करोड़ डिग्री केल्विन है। इतने उच्च तापमान को ध्यान में रखते हुए ही सूर्य को एक "दहकता हुआ गैसीय पिंड" माना जाता है, जिससे निरंतर अपरिमित ऊर्जा का विकिरण होता है। सौर मंडल के विभिन्न ग्रह तथा उपग्रह इसी ऊर्जा की विभिन्न मात्राएं प्राप्त करते हैं।

सूर्य तल के प्रत्येक वर्गगज क्षेत्र से एक लाख अश्व-शक्ति ऊर्जा का विकिरण होता है, किंतु दूर अवस्थित होने के कारण पृथ्वी इस विकीर्ण ऊर्जा का केवल 1/200,00,00,000 भाग ही प्राप्त करती है। फिर भी पृथ्वी द्वारा प्राप्त की गई यह ऊर्जा लगभग 23 खरब अश्व-शक्ति के बराबर है। वैज्ञानिक गणनानुसार संपूर्ण पृथ्वी प्रति मिनट सूर्य से उतनी ऊर्जा प्राप्त करती है जितनी मानव जाति वर्ष भर में विविध कार्यों में प्रयुक्त करती है। वास्तव में भूपटल पर सूर्य से प्राप्त ऊर्जा से ही समस्त भौतिक तथा जैविक क्रियाओं का संचालन होता है। सूर्य अपने धरातल से ऊर्जा का विकिरण 29,7,600 कि.मी. प्रति से. गति वाली विद्युत चुंबकीय तरंगों के द्वारा करता है।

सूर्य से विकीर्ण होने वाली ऊर्जा की मात्रा प्रायः स्थिर होती है। वायुमंडल की बाह्य सीमा पर प्राप्त होने वाली ऊर्जा का कई बार अनेक स्थानों पर निरीक्षण भी किया जा चुका है किंतु इसकी मात्रा में कोई विशेष परिवर्तन नहीं पाया गया। संयुक्त राज्य अमेरिका के स्मिथसोनियन संस्थान ने कैलीफोर्निया में स्थित माउन्ट विल्सन तथा टेबल माउन्टेन की सूर्य वेधशालाओं मे कई बार सौर स्थिरांक का परीक्षण किया और इसका प्रामाणिक मान 1.94 ग्राम कैलोरी प्रति वर्ग से.मी. प्रति मिनट निर्धारित किया। हां, सूर्य तल पर अनेक उपद्रव भी होते रहते हैं इसलिए सौर स्थिरांक में केवल 2 प्रतिशत से 3 प्रतिशत तक परिवर्तन होने की संभावनाएं रहती हैं।

भूपटल पर सर्वत्र सौर ऊर्जा का वितरण समान नहीं पाया जाता। अक्षांशों के अनुसार ऊर्जा प्राप्ति के परिमाण में अंतर आता रहता है।

सूर्य के बारे में कुछ तथ्य

पृथ्वी से सूर्य की दूरी	- 14,95,04,000 किलोमीटर
सापेक्ष दृश्यता	- 4.75
सूर्य का व्यास	- पृथ्वी के व्यास का 109.1 गुना।
गुरुत्व व्यास	- 13,92,000 किलोमीटर
आयतन	- पृथ्वी के आयतन का 13,07,000 गुना
द्रव्यमान	- पृथ्वी के द्रव्यमान का 3.32 लाख गुना
अक्ष पर भ्रमण का समय	- 24 दिन 16 घंटा
घूर्णन अथवा परिभ्रमण की गति	- 320 किलोमीटर प्रति घंटा
धरातल का तापमान	- 5,500 से 6,000 केल्विन तक।
केंद्र का तापमान	- 1,50,00,000 केल्विन तक।
प्रकाशमंडल (कलंक) की दरारें	- 800 से 80,000 किलोमीटर
सबसे बड़ी दरार की लंबाई	- 2,30,400 किलोमीटर
सौर वायुमंडल के क्षेत्र	- उत्क्रमण मंडल, वर्णमंडल और किरीट
सौर किरीट का तापमान	- 10 लाख केल्विन।

सूर्य के प्रकाश मंडल में तत्वों की संख्या	- 40 (टिन, सीसा, सोडियम, पोटैशियम तथा चांदी मुख्य)
सूर्य के परिमाण मंडल का घनत्व	- पृथ्वी के परिमाण मंडल के घनत्व का एक चौथाई।
सूर्य पर वस्तु का भार	- पृथ्वी पर एक किलोग्राम का भार सूर्य पर 27 किलोग्राम।
रासायनिक संगठन -	हाइड्रोजन - 17 प्रतिशत
	हीलियम - 26.5 प्रतिशत
	अन्य - 2.5 प्रतिशत

परंपरागत सारे स्रोतों की तुलना में, सौर ऊर्जा की कुछ विशेषताएं हैं, जैसे - अपरिमित परिमाण, विश्व व्यापक सारी विधियां सिर्फ भविष्य की आशाएं हैं, वर्तमान की या भूतकाल की उपलब्धियां नहीं। एक प्रभावी यांत्रिक निकाय विकसित करने में धन से भी अधिक बड़ी बाधा ऊर्जा भंडारण की समस्या है। जब तक ऊर्जा का उपयोग न करना हो, तब तक इसे पृथ्वी, पानी या अन्य किसी माध्यम को गर्म करके संचित करना अति आवश्यक है। इस प्रकार भंडारण की युक्तियां अति विशाल तथा कष्टसाध्य हैं। लेकिन इनसे निर्दोष ऊष्मा-रोधन की अति उत्तम स्थितियों में भी ऊष्मीय ऊर्जा का क्षय हो ही जाता है।

दूसरी ओर रासायनिक निकायों का यह अंतर्निहित लाभ ही है कि अभिक्रिया-उत्पादों का अनिश्चितकाल तक भंडारण किया जा सकता है। अवशोषित ऊर्जा की पुनःप्राप्ति ऊष्मारोधी अभिक्रिया के प्रतीपन से की जा सकती है। लेकिन परंपरागत सपाट पट्टिका संग्राहकों में ऐसा नहीं होता है। परिचालन ताप में वृद्धि के साथ ही संग्राहक पट्टिका के कार्यरत माध्यम को बढ़ाने की आवश्यकता पड़ती है, जिसके कारण संग्राहक पट्टिका तथा भंडारण की क्षमता में कमी आ जाती है। संभवतः सौर ऊर्जा के उपयोग में गंभीरतम समस्याएं निम्नांकित बातों पर आधारित हैं-

(अ) निरंतर ऊर्जा आपूर्ति की आवश्यकता

(ब) सौर ऊर्जा की अनुपस्थिति में, संपूरक ऊर्जा की उपलब्धि, और

(स) सौर ऊर्जा भंडारण के किसी उपाय की उपलब्धि। इनमें तृतीय तथा अंतिम पहलू विस्तृत है तथा इसके अंतर्गत सिर्फ वे प्रकाश-रासायनिक अभिक्रियाएँ आती हैं जिनमें सूर्य के प्रकाश का उपयोग होता है। सुदूर भविष्य के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग प्रकाश के रूप में अधिक आशाजनक लगता है, ऊष्मा के रूप में नहीं।

कुछ वैज्ञानिकों का कथन है कि प्रकाश-रसायन सौर ऊर्जा के सदुपयोग की कुंजी है। प्रकाश-रसायन में शोध का उद्देश्य ऐसी अभिक्रियाओं की तलाश है, जो सूर्य उपलब्धता, अति निम्न संकेंद्रण तथा अत्यंत परिवर्तनशीलता। ऊर्जा के परिमाण की प्रशंसा इस बात की जानकारी से की जा सकती है कि सारी दुनिया का ऊर्जा का वार्षिक उपभोग मात्र 150 ट्रिलियन (1500 अरब) अश्व-शक्ति है जबकि पृथ्वी पर प्राप्त होने वाली वार्षिक सौर ऊर्जा 25,000 ट्रिलियन (250000 खरब) अश्व-शक्ति है।

भारत-जैसे विकासशील देश के आर्थिक तथा सामाजिक स्तर को सुधारने के तरीकों में से प्रमुख हैं - सौर ऊर्जा का सीधे कार्य में परिवर्तन। अभी तक हमने सौर ऊर्जा का उचित उपयोग नहीं किया है। सूर्य की विकीर्ण ऊष्मा से यांत्रिक तथा वैद्युत शक्ति प्राप्त करना तथा वाष्प-इंजिन चलाना तकनीकी दृष्टि से संभव है। प्रकाश-संश्लेषण में, जिसमें हमें सारा भोजन तथा ईंधन प्राप्त होता है, सूर्यप्रकाश का ही सदुपयोग होता है। ऐसी ही अन्य प्रकाश-रासायनिक अभिक्रियाएं ढूंढ़ना हमारे लिए चुनौती है। ये अभिक्रियाएं बिना उपजाऊ जमीन और हरे पौधों के सूर्य के प्रकाश को ऊर्जा में रूपांतरित करेंगी।

सूर्य एक स्रोत के रूप में -

सौर ऊर्जा सूर्य के निरंतर होने वाली श्रृंखला अभिक्रियाओं से उत्पन्न होती है। इन अभिक्रियाओं में चार मिलियन (40 लाख) टन हाइड्रोजन एक सेकंड के अंदर हीलियम में रूपांतरित हो जाती है। सौर विकिरण के रूप में सूर्य से निरंतर निर्मुक्त होने वाली ऊर्जा 380 बिलियन ट्रिलियन (38×10^{10} खरब) किलोवाट है।

जैसे ही सौर विकिरण वायुमंडल में प्रवेश करता है, यह आम तौर पर निम्नांकित भागों में विभक्त हो जाता है -

(1) 25 प्रतिशत वायुमंडल द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है।

(2) 20 प्रतिशत भूमि द्वारा परावर्तित हो जाता है।

(3) 30 प्रतिशत के लगभग समानांतर किरणों के रूप में पृथ्वी पर पहुंचता है।

(4) 20 प्रतिशत विसरित किरणों के रूप में पृथ्वी पर पहुंचता है।

पृथ्वी के किसी भी स्थान पर, सौर विकिरणों की मात्रा तथा तीव्रता, उस स्थान पर अक्षांश, मौसम तथा वायुमंडलीय पारदर्शिता पर आधारित होती है।

सौर ऊर्जा को उपयोगी ऊर्जा में परिवर्तित करने की पांच आधारभूत तकनीकें हैं -

(अ) ऊष्मीय (आ) वैद्युत (इ) रासायनिक (ई) जीव-विज्ञानीय तथा (उ) यांत्रिक

सौर ऊर्जा का उपयोगी ऊष्मीय ऊर्जा में रूपांतरण कई प्रकार के पट्टिका संग्राहकों के प्रयोग से किया जा सकता है, जिनमें हमें कक्षताप 60-90° F से लेकर 700° F तक का ताप मिल सकता है। समुद्र एक विशाल ऊष्मीय ऊर्जा-संग्राहक का काम करता है। अतः समुद्र के तल तथा गहरे पानी के ताप के अंतर को ऊष्मागतिकी-चक्र द्वारा उपयोगी ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है।

सौर ऊर्जा को सीधे वैद्यूत ऊर्जा में भी रूपांतरित किया जा सकता है। सिलिकॉन तथा कैडमियम सल्फाइड-जैसे अर्धचालकों से बनी प्रकाशवोल्टीय युक्तियाँ विद्युत्-धारा उत्पन्न करती हैं।

सौर ऊर्जा का यांत्रिक ऊर्जा में परोक्ष रूपांतरण पवन टरबाइनों अथवा क्षैतिज या ऊर्ध्वाधर रोटरों, जो पवन-धारा में चक्रण करते हैं, द्वारा किया जा

सकता है। यह गति सीधे पंपों या अन्य यांत्रिक युक्तियों के निर्माण में प्रयुक्त की जा सकती है। यह वैद्युत ऊर्जा में भी रूपांतरित की जा सकती है यदि इससे विस्तृत जेनरेटर चलाए जाएं।

हमारे देश का यह सौभाग्य है कि यहां सूर्य का प्रकाश संपूर्ण वर्ष पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध रहता है। वर्षा ऋतु के दो-तीन महीनों को छोड़कर वर्ष की शेष अवधि में इस महाद्वीप पर सूर्य चमकता ही रहता है और कभी-कभी तो इस अवधि में सूर्य का प्रकाश असह्य हो जाता है। ऐसा अनुमान है कि सूर्य पांच सप्ताह की अवधि में इस पृथ्वी को इतनी ऊर्जा प्रदान कर देता है कि यदि हम उसका प्रयोग कर सकें तो सदियों तक यह पर्याप्त है। संसार में कुल प्रयुक्त की जा रही ऊर्जा की 28,000 गुना ऊर्जा पृथ्वी पर सूर्य से उपलब्ध होती है। इसमें से 30 प्रतिशत शार्टवेव रैडिएशन द्वारा वापस, 47 प्रतिशत वायुमंडल द्वारा सोख ली जाती है, 23 प्रतिशत हाइड्रोलौजिकल-साइकल (जलचक्र) में प्रयुक्त हो जाती है। पृथ्वी पर अभी तक सौर ऊर्जा का केवल 4 प्रतिशत ही प्रयुक्त हो पाता है। निःसंदेह सौर ऊर्जा अन्य सभी प्रकार की ऊर्जाओं का मूल स्रोत है और वर्तमान ऊर्जा संकट की स्थिति में ऊर्जा की मांग की पूर्ति करने में सक्षम है। सूर्य द्वारा उत्पन्न कुल ऊर्जा का केवल दस लाखवां अंश ही पृथ्वी तक पहुंच पाता है, किंतु यह अंश समस्त ज्ञात जीवाश्मी ईंधन से साल भर में प्राप्त ऊर्जा से 5-10 गुना अधिक है। पृथ्वी पर पहुंचने वाली सूर्य की किरणों की सघनता पृथ्वी के धरातल पर 100 किलोवाट प्रति वर्गमीटर है। इतने विशाल ऊर्जा भंडार की प्राप्ति हमारे लिए एक वरदान है।

सूर्य की ऊर्जा के सीधे उपयोग के लिए प्रति वर्गमीटर 1/2 किलोवाट ऊर्जा उपलब्ध है। भारत के कर्क रेखा पर स्थित होने के कारण प्राप्त होने वाली सौर ऊर्जा की मात्रा लगभग एक हजार अरब किलोवाट है। यह हमारे सभी स्रोतों से प्राप्त ऊर्जा से एक सौ हजार गुना अधिक है। अमेरिका और रूस में जहां भारत की अपेक्षा कम सौर ऊर्जा मिलती है फिर भी वहां इस प्रकार की ऊर्जा का सफलतापूर्वक उपयोग शुरू हो गया है। हमारे देश में गर्मी के दिनों में इतनी अधिक सौर ऊर्जा प्राप्त होती है कि अगर इसका सफलतापूर्वक उपयोग किया जाए तो इस देश में बिजली

संकट की समस्या नहीं रह जाएगी। सौर ऊर्जा से लाभ प्राप्त करने के लिए आजकल कई परियोजनाएं तथा प्रायोगिक उपकरण बन रहे हैं, जिनमें हजारों फोटो-वोल्टाइक सेलों द्वारा सूर्य के प्रकाश का उपयोग होता है। अनुमान है, इस समय सारे विश्व में नव विकसित टेक्नोलौजी के आधार पर 2-3x10^{9} किलोवाट/घंटा/वर्ष सौर ऊर्जा का उपयोग किया जा रहा है और अगले 20 वर्षों में इसमें 1000 गुनी बढ़ोत्तरी की संभावना है। सौर सेलों का उत्पादन आवश्यक है। अनुमान है कि प्रतिवर्ष फोटो-वोल्टाइक सेलों पर शोध करने में ही 2000 लाख डालर व्यय किया जा रहा है।

सूर्य से ऊर्जा क्यों और कैसे मिलती है?

सूर्य गैस का एक परमाण्विक ग्लोब है, जिसका अर्द्धव्यास पृथ्वी की अपेक्षा 100 गुना अधिक है। इसके धरातल केंद्र तक का तापक्रम 5500^{0} से 150 लाख डिग्री सेल्सियस है। सौर ऊर्जा सूर्य के निरंतर होने वाली श्रृंखला अभिक्रियाओं से उत्पन्न होता है। इन अभिक्रियाओं में चार मिलियन (40 लाख) टन हाइड्रोजन एक सेकेण्ड के अंदर हीलियम में रूपांतरित हो जाती है। सौर विकिरण के रूप में सूर्य के अनरंतर निर्मुक्त होने वाली ऊर्जा 380 बिलियन ट्रिलियन (38x10^{10} खरब) किलोवाट है। सूर्य से उत्सर्जित यह ऊर्जा विद्युत् चुंबकीय ऊर्जा के रूप में होती है। इसका तरंगदैर्ध्य एक विस्तृत बैंड में फैला होता है। इस ऊर्जा का 95 प्रतिशत से अधिक भाग 0.25 से 2.5 मिलीमाइक्रोन तक के संकीर्ण रेंज में सघन है तथा हरे क्षेत्र में सर्वाधिक हो जाता है। दृश्य प्रकाश इसी रेंज या परास में है। सूर्य 5500^{0} से. धरातलमान वाले कृष्ण पिंड की भांति ऊर्जा विकीर्ण करता है। सूर्य के धरातल पर प्रति सेकंड कुल ऊर्जा 8 किलोवाट प्रति वर्ग सेन्टीमीटर विकीर्ण होती है। किंतु पृथ्वी के धरातल पर यह सौर ऊर्जा शून्य से एक किलोवाट प्रति वर्ग मीटर पहुंचती है। इस प्राप्त ऊर्जा का अनेक कारणों से ह्रास होता है। उदाहरणार्थ- अवशोषण, प्रकीर्णन, परावर्तन, अपवर्तन, पृष्ठसर्पीकोण बाह्य वायुमंडल से पृथ्वी के धरातल तक सौर विकिरणों के प्रेषण मे उत्पन्न बाधाएं आदि।

सौर ऊर्जा के उपयोग को ध्यान में रखते हुए बड़े तथा लघु दोनों पैमानों पर प्रयास किए जा रहे हैं। बड़े पैमानों पर सौर ऊर्जा के कई उपयोग ज्ञात हो चुके हैं, जैसे-सोलर पावर टावर, सौर फार्म, सौर उपग्रह विद्युत केंद्र, सौर चुंबक द्रव गतिकीय संयंत्र आदि। छोटे पैमाने पर सोलर कुकर, सोलर पम्प, सोलर इंजन आदि बनाए जा चुके हैं। सौर ऊर्जा का उपयोग घरेलू कार्यों, फसल सुखाने, वातानुकूलन, स्थान-तापन, पानी निकालने, विलयीकरण के लिए तथा उच्च तापमान और विद्युत् दोनों के उत्पादन के लिए किया जा सकता है। वर्तमान समय में सौर ऊर्जा पर आधारित अनेक नए-नए उपकरणों का आविष्कार किया गया है जिनमें हीटर, सौर कुकर, केलकुलेटर, रेडियो आदि मुख्य हैं। इसके अतिरिक्त भी अनेक उपकरणों के आविष्कार किए जा रहे हैं। सौर ऊर्जा से बिजली का उत्पादन भी अब हमारे देश में हो रहा है और सड़कों पर प्रकाश की व्यवस्था की जा रही है। ऊंचे पहाड़ों पर भी, जहां सौर ऊर्जा अधिक होती है, सौर किरणों से चालित विद्युत् केंद्रों के निर्माण की प्रस्तावना पर विचार किया जा रहा है।

सौर ऊर्जा के उपयोग

ताप (गर्मी)		विद्युत् (बिजली)
प्रत्यक्ष	गर्मी का प्रयोग	
1. पानी गर्म करना	1. बिंदु फोकस या लाइन	1. सोलर थर्मल पावर
2. सुखाना	फोकस के द्वारा	प्रोडक्शन रूट
3. पकाना		2. सोलर रेडिएशन द्वारा
4. आसवन (डिस्टिलेशन)	(क) कन्सेंट्रेटिंग कलेक्टर	(क) फोटो-वोल्टाइक
5. सोलर पम्प	(ख) पैरोबोलिक कलेक्टर	(ख) थर्मो-इलेक्ट्रिक
6. सोलर पावर प्लान्ट	(ग) पैराबोलिक डिस्क कलेक्टर द्वारा	(ग) फोटो-कैमिकल
7. लकड़ी सुखाने का कार्य		

सौर-ऊर्जा का सबसे सरल उपयोग इसका ऊष्मीय ऊर्जा में परिवर्तन है। सौर ऊष्मीय संग्राहकों को निम्नलिखित वर्गों में बांटा जा सकता है -

(1) निम्न ताप के बिना संकेंद्रण सपाट पट्टिका संग्राहक

(2) मध्यम ताप संकेंद्रण संग्राहक, जैसे पैराबोलीय बेलन, तथा

(3) उच्च ताप उच्च संकेंद्रण संग्राहक, जैसे पैराबोलीय संकेंद्रण अथवा कई सपाट दर्पणों द्वारा एक बिंदु पर संकेंद्रण द्वारा बने संकेंद्रक।

संकेंद्रकों से संबंधित विवरण

वर्ग	उदाहरण	ताप	दक्षता
1. निम्न संकेंद्रण	सपाट पट्टिका	150-130°फा.	30-50 प्रतिशत
2. मध्यम संकेंद्रण	पैराबोलीय बेलन	500-1200°फा.	50-70 प्रतिशत
3. उच्च संकेंद्रण	पैराबोलीय बेलन	1000-1400°फा.	60-75 प्रतिशत

पृथ्वी के स्पुतनिकों पर विद्युत् केंद्रों के निर्माण की प्रायोजना का भी ब्यौरेवार अध्ययन हो चुका है। ऐसे विद्युत् केंद्र सूर्य की किरणों की ऊर्जा पूर्णतया प्राप्त कर सकेंगे। वे उन्हें सूक्ष्म तरंगों के रूप में पृथ्वी पर भेजेंगे जहां उन्हें विद्युत् में परिवर्तित किया जाएगा। रूसी इंजीनियर स्पुतनिकों पर 25x5 वर्ग कि.मी. आकार वाले विद्युत केंद्रों की प्रायोजना पर कार्य कर रहे हैं। इतने विस्तृत क्षेत्र पर 14 मिलियाई फोटो सेल रखे जा सके हैं। विद्युत केंद्र का वजन एक सौ हजार टन होगा। इस प्रकार का विद्युत् केंद्र इतनी ऊर्जा दे सकेगा जितनी पृथ्वी पर दस परमाणु-बिजली घर देंगे। यह लगभग दस हजार मेगावाट होगी।

सौर ऊर्जा बहुत ही आकर्षक और वैकल्पिक साधन है। यह शुद्ध और व्यावहारिक तौर पर फिर से नया होने वाले अप्रदूषक स्रोत हैं। इससे वर्तमान ऊर्जा संकट के समाधान के लिए अपेक्षाकृत अधिक संभावनाएं हैं। किंतु भारत में सौर

ऊर्जा की अपार संभावनाओं के होते हुए भी कोई विशेष कार्य नहीं हुआ है। हम अभी तक सौर ऊर्जा को विद्युत् ऊर्जा में बदलने वाले फोटो-सेलों का निर्माण स्वदेशी तकनीक से अपने देश में नहीं कर सके हैं। राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला, नई दिल्ली ने सन् 1950 के आरंभ में सौर ऊर्जा पर कार्य का शुभारंभ करके श्रेष्ठ कार्य किया है, किंतु तब तेल तथा कोयला विश्व में इतने सस्ते थे कि सौर ऊर्जा को पर्याप्त महत्व नहीं दिया गया।

राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला के अतिरिक्त केंद्रीय नमक और समुद्री रसायन अनुसंधान संस्थान, केंद्रीय भवन निर्माण अनुसंधान संस्थान तथा केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान-जैसे संस्थानों में पानी गर्म करने, सुखाने, ठंडा करने तथा स्थान गर्म करने आदि विभिन्न समस्याओं पर थोड़ा बहुत काम किया गया लेकिन कोई व्यावहारिक परिणाम प्राप्त नहीं हुए। सन् 1973 में राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी समिति ने सौर ऊर्जा के संबंध में एक नीति निर्धारित की। नीति निर्धारण के बाद कई संगठनों ने अनुसंधान और विकास के काम हाथ में लिए। इनमें भारत हैवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड, केंद्रीय इलेक्ट्रोनिक्स लिमिटेड तथा राष्ट्रीय उपकरण लिमिटेड सहित गैर-सरकारी क्षेत्र की अन्य कई कंपनियां शामिल हैं। विभिन्न प्रयोगशालाओं, अनुसंधान संस्थानों तथा उद्योगों में लगभग 40 अनुसंधान विकास परियोजनाएं बनाई गई हैं। पानी गर्म करने के संयंत्र तथा सौर कुकर-सरीखे कई उपकरणों का विकास किया गया है। इसके अलावा सौर ऊर्जा से काम करने वाला तापन पम्प भी विकसित किया गया है।

इस प्रकार कह सकते हैं कि सौर ऊर्जा के विषय में इस समय अनेक संस्थाएं अनुसंधान और विकास कार्य कर रही हैं। कार्य के लिए मुख्य रूप से निम्नलिखित क्षेत्र हैं-

(1) सौर ताप

(2) सौर विद्युत्

सौर-ऊर्जा द्वारा चालित उपकरणों के निर्माण के क्रम में वाराणसी के साह औद्योगिक संस्थान ने एक ऐसे सौर पंप का विकास किया है जो गर्मी के दिनों में ग्रामीण क्षेत्रों की सिंचाई के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है। इस पंप में फोटो-सेलों के द्वारा सौर ऊर्जा को विद्युत् ऊर्जा में परिवर्तित किया गया है। इस सौर पम्प में प्रयुक्त होने वाले फोटो-सेल का निर्माण सेन्ट्रल इलेक्ट्रोनिक्स लिमिटेड, साहिबाबाद ने किया है। फोटो-सेल में आयातित सिलिकोन का उपयोग होने के कारण इसकी कीमत 30-40 हजार रुपए के लगभग है। स्वाभाविक है कि इस तरह के उपकरण भारत सरीखे देश में अधिक कीमत के कारण व्यावहारिक नहीं हो सकते। अतः व्यावहारिक बनाने के लिए आवश्यकता है स्वदेशी तकनीक के विकास की। हालांकि इस संस्थान ने सौर हीटर और सौर शुष्कन जैसे यंत्रों का भी निर्माण किया है। पश्चिमी जर्मनी तथा आस्ट्रेलिया के सहयोग से सौर तापीय पम्प तथा सौर वातानुकूलन परियोजना पर काम चल रहा है। अमरीकी संगठनों के सहयोग से भारत में सौर शुष्कन और सौर संग्राहक के विकास पर भी काम हो रहा है। फिर भी हमें सौर ऊर्जा के क्षेत्र में अभी बहुत कुछ करने की आवश्यकता है।

□

5

बायोगैस ऊर्जा

बायोगैस ऊर्जा पशु-गोबर, मलमूत्र, सड़े हुए आलू, जलकुंभी, कृषि तथा उद्योगों के अपशिष्ट पदार्थों तथा घरेलू कूड़े-कचरे या इसी तरह के अन्य जैविक पदार्थों के सड़ने की क्रिया के फलस्वरूप प्राप्त होती है। आज के विकसित संयंत्रों में समुद्री शैवाल, सुअर के बाड़ों और मुर्गीखानों का कचरा भी इस्तेमाल किया जाता है। बायोगैस (गोबर गैस) में मेथेन नाम की गैस जलने से लिए उत्तरदायी होती है और इसकी मात्रा लगभग 55 से 77 प्रतिशत तक होती है। इसके अतिरिक्त इसमें 30 प्रतिशत कार्बन डाइऑक्साइड, 1 प्रतिशत हाइड्रोजन सल्फाइड तथा अल्प मात्रा में ऑक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन तथा कार्बन मोनोक्साइड विद्यमान रहते हैं। मुख्य मेथेन गैस के उत्पादन के लिए नान-मेथेनोजैनिक, एसिटोजैनिक तथा अवायवीय मेथेनोजेनिक नामक तीन प्रकार के बैक्टीरिया उत्तरदायी हैं। ये जीवाणु हल्के, क्षारीय ऑक्सीजन रहित माध्यम में तेजी से बढ़ते हैं। अतः अधिक अम्लों का एकत्र होना संयंत्र के सफलतापूर्वक कार्य करने में व्यवधान पैदा करता है।

ऊर्जा समस्या के समाधान हेतु बायोगैस ऊर्जा का भारतीय परिवेश में बहुत महत्व है क्योंकि भारत एक कृषि प्रधान देश है तथा यहां के किसान बड़ी संख्या में पशु-पालन करते हैं। गांवों में ईंधन के लिए पेड़ों के निरंतर कटने से जहां एक ओर हम पेड़ों से होने वाले लाभ से वंचित हो रहे हैं, वहीं दूसरी ओर पर्यावरण-प्रदूषण बढ़ रहा है तथा पारिस्थितिकी असंतुलन की संभावना बढ़ रही है। बायोगैस संयंत्र से चलने वाला चूल्हा धुआंरहित होता है और इस संयंत्र के लिए बायोगैस ऊर्जा एक वरदान है क्योंकि इससे भोजन पकाने तथा प्रकाश उपलब्ध कराने-जैसी आवश्यकताओं की पूर्ति आसानी से हो जाती है। यह ऊर्जा समस्या के हल प्रस्तुत करने के अलावा व्यर्थ जा रहे अपशिष्ट पदार्थों का इस्तेमाल करके प्रदूषण कम करने में भी सहायक होती है। वैज्ञानिकों के अनुसार 27 घनमीटर बायोगैस से प्राप्त होने वाली ऊर्जा 16.2 घनमीटर प्राकृतिक गैस, 29 लीटर ब्यूटेन, 24 लीटर गैसोलीन (पेट्रोल) अथवा 21 लीटर डीज़ल तेल के समतुल्य होती है।

ग्रामीण विकास को द्रुतगति प्रदान करने तथा ग्रामीणों को स्वास्थ्य तथा आर्थिक लाभ पहुंचाने में बायोगैस संयंत्रों की भूमिका को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। एक अनुमान के अनुसार भारत में लगभग 1 करोड़ 50 लाख परिवार ऐसे हैं जिनके पास पशुधन है जिससे भारत में प्रतिवर्ष लगभग 30-40 करोड़ मीट्रिक टन तक गोबर तथा पशुविष्ठा उपलब्ध होती है। हमारे देश में लगभग 75 अरब घनमीटर बायोगैस प्रतिवर्ष तैयार करने की क्षमता है, जो 1205.4 लाख किलोवाट विद्युत् ऊर्जा के बराबर है। इससे भारत की 77 प्रतिशत जनता की बिजली की आवश्यकता को पूरा किया जा सकता है। एक अन्य अनुमान के अनुसार केवल भारत के 22 करोड़ मवेशियों का गोबर यदि बायोगैस संयंत्रों में इस्तेमाल किया जा सके तो इससे प्रतिवर्ष 30 करोड़ घनमीटर गैस तथा 20 करोड़ टन कंपोस्ट (खाद) उपलब्ध हो सकती है। इन मवेशियों से जितना गोबर प्राप्त होता है वह एक करोड़ गोबर गैस संयंत्रों (4 घनमीटर क्षमता वाले) के लिए पर्याप्त है।

बायोगैस कैसे बनती है?

गोबर तथा कूड़ा-करकट आदि जैविक पदार्थों को गोबर गैस संयंत्र में डालने के पूर्व 10 दिन तक किसी बंद ऑक्सीजनरहित स्थान में रखकर सड़ाया जाता है। इस सड़े कच्चे पदार्थ से गैस जल्दी निकलने लगती है। सूखे पदार्थों की अपेक्षा गूदेदार पदार्थों से अधिक मात्रा में गैस प्राप्त होती है। इस मिश्रण को डालते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि इसमें मिलाए गए जल का भार कूड़े से अधिक न होने पाए। तनु या पतले मिश्रण से गैस निकलने की क्रिया बहुत कम हो जाती है। कभी-कभी अत्यधिक भरण के फलस्वरूप किण्वन-टैंक में वाष्पशील अम्ल एकत्रित हो जाते हैं। इसके उपचार के लिए चूना या अन्य क्षारीय पदार्थ मिलाना आवश्यक होता है। सफल किण्वन के लिए सर्वोत्तम पी.एच-मान 6.0-8.0 तक है। बायोगैस संयंत्रों में होने वाली रासायनिक क्रियाएं 30° से. से 40° से. तापमान पर सुचारू रूप से होती हैं। तापमान में आकस्मिक परिवर्तन का संयंत्रों की कार्य कुशलता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसी कारण किण्वन-टैंक के अंदर बनाए जाते हैं जहां वे तापमान के आकस्मिक परिवर्तन से अप्रभावित रह सकें।

बायोगैस संयंत्र की कार्यशीलता के दो प्रमुख तत्व कार्बन और नाइट्रोजन हैं। इनके विशिष्ट अनुपात (कार्बनःनाइट्रोजन 30:1) के प्रति सचेष्ट रहना आवश्यक होता है, अन्यथा गैस उत्पादन की गति में कमी आ जाती है। तांबा, जस्ता, पारा, क्रोमियम तथा निकेल जैसे कुछ पदार्थ संयंत्रों के लिए अत्यंत हानिकारक हैं। कीटनाशी रसायन तथा कृत्रिम अपमार्जक भी किण्वन की स्थिति में रुकावट डालते हैं।

बायोगैस संयंत्र से प्राप्त होने वाली ऊर्जा से न केवल भोजन पकाया जा सकता है बल्कि इससे विद्युत् उपकरणों को भी चलाया जाता है। इससे देश में विद्युत्, लकड़ी व ईंधन की बचत होती है जो देश के अन्य विकास कार्यों में प्रयुक्त की जा सकती है। स्वच्छता के दृष्टिकोण से भी बायोगैस-संयंत्र उपयोगी है। इससे धुआं भी उत्पन्न नहीं होता है। अतः पर्यावरण-प्रदूषण की समस्या को कम किया जा सकता है।

बायोगैस संयंत्र लगाने हेतु आवश्यक बातें

संयंत्र को लगाने हेतु उपभोक्ताओं को निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिएः

1. स्थान ऐसा हो जहां पानी का भराव न होता हो, धूप ज्यादा हो और खुली तथा शुष्क जमीन हो।
2. संयंत्र रसोईघर या पशुशाला के निकट होना चाहिए।
3. संयंत्र को पानी के कुएं से लगभग 25 फुट की दूरी पर लगाना चाहिए।
4. संयंत्र की दीवार मकान की दीवार से 4-5 फुट हटकर बनवाना चाहिए।
5. बरसाती नाले व तालाब के किनारे संयंत्र का निर्माण कार्य नहीं कराना चाहिए।
6. संयंत्र का निर्माण पेड़ों से दूर कराना चाहिए।
7. संयंत्र निर्माण स्थल की मिट्टी भार की वहन क्षमता रखती हो अन्यथा संयंत्र के बैठने की संभावना रहती है।

संयंत्र के आकार का निर्धारण

गोबर की उपलब्धता और खाना पकाने की आवश्यकता को देखते हुए निम्नलिखित सारणी से किसान के पास पशुओं तथा उनकी आवश्यकता के हिसाब से सही नाप के संयंत्रों का चुनाव किया जाना चाहिए ·

गैस संयंत्र की नाप (घन मी.)	रोजाना डाले जाने वाले गोबर की मात्रा (कि.ग्रा.)	जरूरी बड़े पशुओं की संख्या	कितने व्यक्तियों के लिए खाना बन सकता है
2	50	3-4	4-6
3	75	5-6	7-10
4	100	7-8	11-14
6	150	10-12	15-20
8	200	12-15	20-25
10	250	16-20	25-30

संयंत्रों के डिज़ाइन का चुनाव

इस समय गैस संयंत्रों के निम्नलिखित प्रचलित डिजाइन हैं :

1. स्थिर गुंबद (डोम) वाला जनता टाइप मॉडल
2. तैरता हुआ (फ्लोटिंग) गैस होल्डर (के.वी.आई.सी. मॉडल)
3. दीनबंधु मॉडल
4. ऐंगिल आयरन के ऊर्जा फ्रेम पर लिपटा पौलीथीन की चद्दर से बना हुआ।(गणेश मॉडल)

जनता मॉडल बायोगैस संयंत्र

संपूर्ण संयंत्र ईंट, सीमेन्ट, रेती से भूमि के नीचे बनाया जाता है। इसके निम्नलिखित 6 भाग होते हैं :

फाउन्डेशन, डाइजेस्टर, इनलेट, आउटलेट, डोम तथा गैस-पाइप।

संयंत्र के निर्माण का कार्य प्रशिक्षित राजमिस्त्रियों द्वारा कराया जाना चाहिए। संयंत्र पूर्ण होने पर निर्धारित मात्रा में गोबर और पानी के घोल को संयंत्र में डालकर चालू करना चाहिए। संयंत्र चालू होने पर ग्राम्य स्तरीय कर्मचारी द्वारा संयंत्र की जांच करके कार्य पूर्ति प्रमाण-पत्र दिया जाता है, जिस पर प्राविधिक अधिकारी तथा खंड विकास अधिकारी के भी हस्ताक्षर होने चाहिए।

दीनबंधु बायोगैस संयंत्र

यह संयंत्र एक्शन ऑफ फूड प्रोडक्शन "एफप्रो", नई दिल्ली द्वारा आविष्कृत है। इसमें अन्य संयंत्रों के मुकाबले कम लागत आती है, जबकि गैस क्षमता बराबर ही है और प्रशासन द्वारा प्रदत्त अनुदान भी अन्य बायोगैस संयंत्र के बराबर ही है। इस संयंत्र की प्रमुख विशेषतएँ निम्नलिखित हैं :

1. अन्य संयंत्रों के मुकाबले इसकी कुल लागत 30 से 50 प्रतिशत कम है।
2. इसके निर्माण में निर्माण-सामग्री भी कम लगती है और इसके निर्माण में समय कम लगता है।
3. इसमें डोम बनाने के लिए किसी भी प्रकार के ढूला "शटरिंग" का प्रयोग नहीं किया जाता है जो कि एक कठिन कार्य होता है।
4. इसके रखरखाव पर कम खर्च आता है जो कि नहीं के बराबर है।
5. इसका निर्माण कम जगह में किया जा सकता है।
6. संपूर्ण कार्य जमीन के अंदर होने के कारण ऊपरी सतह का सदुपयोग किया जा सकता है।

दीनबंधु बायोगैस संयंत्र का संपूर्ण निर्माण कार्य ईंट, सीमेन्ट आदि से विशेष विधि द्वारा किया जाता है। इसके गड्ढे की खुदाई विशेष प्रकार से की जाती है। इसकी तली कढ़ाई की तरह गोल आकार की खोदी जाती है। इसके आधार (तली)

को पत्थर की गिट्टी, सीमेन्ट व बालू से बनाया जाता है। गोबर के घोल के प्रवेश के लिए एक सीमेंट का पाइप लगाया जाता है और खाद निकास के लिए एक कुंडी बनाई जाती है। संयंत्र के डाइजेस्टर तथा गुंबद का निर्माण अंडाकार रूप में होता है। इसके डोम बनाने की विशेषता यह है कि इसमें कोई भी ढूला नहीं बनाया जाता है। एक बांस और कुछ तार के टुकड़ों तथा थोड़े समय के लिए टेक के रूप में प्रयुक्त किए जाते हैं। कुछ विशेषताओं तथा सावधानियों के साथ इस संयंत्र का निर्माण कम खर्च और कम समय में पूरा किया जा सकता है।

संयंत्र के संचालन के संबंध में कुछ उल्लेखनीय बिंदुः

संयंत्र को चालू करने से पूर्व निम्न बातों को ध्यान में रख लेना चाहिएः

1. संयंत्र में गोबर का घोल भरने से पहले डाइजेस्टर डोम तथा पाइप लाइन की जांच कर लेनी चाहिए जिससे रिसाव की कहीं से संभावना न रहे।

2. गोबर और पानी को बराबर मात्रा में अच्छी तरह मिलाकर भरना चाहिए। गोबर में मिट्टी, कंकड़ या अन्य पदार्थ नहीं होने चाहिए।

3. पहली भराई जल्दी करें, गोबर इकट्ठा करते समय इसे गीला रखें।

4. पहली भराई के 10 दिन पहले से गोबर इकट्ठा करते रहना चाहिए।

5. पहली बार भरी गैस को बाहर निकाल देना चाहिए क्योंकि उस गैस में हवा मिली हो सकती है - जिससे विस्फोट हो सकता है।

6. संयंत्र में निर्धारित मात्रा में अधिक घोल न डालें अन्यथा घोल बिना गैस दिये ही बाहर निकल जाएगा।

7. संयंत्र में झाग बनाने की स्थिति को रोकने के लिए दिन में 1 या 2 बार बांस डालकर घुमाना चाहिए।

8. जाड़े के मौसम में तापमान में गिरावट आ जाती है जिससे गैस कम बनती है। इसके लिए निम्नलिखित सुझाव लाभदायक हो सकते हैं :-

(1) गोबर घोलने के लिए गर्म पानी का प्रयोग करें।

(2) घोल बनाने की टंकी में घोल बनाने के बाद धूप में गर्म हो जाने पर डाइजेस्टर से भरिए।

(3) मलमूत्र-जैसे जैविक पदार्थों को जिनमें नाइट्रोजन का प्रतिशत अधिक होता है, घोल में मिलाने से गैस का उत्पादन अधिक हो जाता है।

(4) घोल को जाड़े के मौसम में पॉलिथीन या मिट्टी से ढककर रखना चाहिए।

संयंत्र के संचालन की समस्याएं - कारण और निदान

बायोगैस संयंत्र के संचालन की सामान्य समस्याएं, उनके कारण और समाधान नीचे दिए जा रहे हैं :

निर्माण संबंधी समस्या/कमियां	कारण	निवारण उपाय
1. डाइजेस्टर की दीवार में दरार पड़ना	नींव से पानी का रिसना	जांच कराकर मरम्मत कराई जाए
2. गैस निकलना (लीकेज)	गलत तरीके से डोम का निर्माण	,, ,, ,,
3. पाइप लाइन में पानी का जमाव	पानी का ट्रेप गलत तरीके से लगाना।	ढलान की जांच कर पानी के ट्रेप को सही स्थिति में ठीक करना।

	परिचालन संबंधी समस्या	कारण	निराकरण उपाय
1.	संयंत्र की प्रथम भराई के बाद गैस का न बनना	समय की कमी	3-4 सप्ताह लग सकते हैं।
2.	घोल का स्तर इनलेट तथा आउटलेट चैम्बर में न उठे।	घोल का कम डाला जाना, डोम अथवा पाइप में छिद्र, संयंत्र में पपड़ी का बनना	घोल और डालिए। जांच कर मरम्मत कराएं। डोम में घोल को बांस से हिलाएं
3.	संयंत्र में गैस है, लेकिन गैस स्टोव में नहीं आ रही है।	पाइप में रुकावट गैस पाइप के छिद्र में घोल फंसने से	पानी के ट्रेप को खोलिए। नेट बाल को खोलें, पानी छोड़ें।
4.	गैस जलती नहीं हैं।	गलत ढंग से गैस होना	सही ढंग से मिला हुआ घोल डालें।
5.	बर्नर से हटकर लौ का निकलना।	दबाव बहुत अधिक है या नॉजल पर कार्बन इकट्ठा है।	गैस आउटलेट वाल्व को ठीक से और साफ करें।
6.	लौ का बुझ जाना।	अपर्याप्त दबाव	गैस की मात्रा की जांच करना।
7.	लैम्प से रोशनी कम।	हवा और गैस का संयोजन ठीक नहीं है।	दोनों का संयोजन ठीक करें।

परिचालन संबंधी समस्या	कारण	निराकरण उपाय
8. लोहे के गैस होल्डर और पाइप में जंग लगना	रखरखाव और सफाई में कमी।	जंग से बचाने के लिए वार्निश इत्यादि करना चाहिए।
9. इनलेट तथा आउटलेट पाइप का बंद होना।	साफ गोबर के स्थान पर अन्य जैविक पदार्थों का प्रयोग।	पशु गोबर का प्रयोग करें और लंबी लकड़ी से सफाई करें।
10. गैस लैम्प में मेंटल का अधिक टूटना।	गैस का प्रेशर अधिक होना।	लैम्प जलाते समय गैस रेग्युलेटर धीरे खोलकर लैम्प जलाएं।

जनता बायोगैस संयंत्र में चिनाई हेतु मसाले (सीमेंट, बालू मिट्टी का अनुपात)

1. फाउंडेशन मिट्टी में - 1:3:6 या 1:2:4 (आवश्यकतानुसार)
2. डाइजेस्टर की चिनाई में - 1:5
3. आर्च में मसाला, सीमेन्ट, गैस पोर्शन - 1:3 की चिनाई तथा उसकी नाली डोम के ऊपर प्लांट और इनलेट आउटलेट में मसाला।
4. डोम के अंदर ग्रूब - 1:1 (डोम साफ करने के बाद सफाई व ग्रूब काट कर तराई व सिर्फ सीमेन्ट से पुताई करने के बाद ग्रूब भरनी)

5. डोम का प्लास्टर	- 1:2 (पूरा डोम का प्लास्टर एक ही दिन में होना चाहिए और तुरंत सीमेन्ट से घोला जाए)
6. डाइजेस्टर का प्लास्टर	- 1:3 (प्लास्टर व सीमेन्ट को घोटा जाए)
7. फाउन्डेशन की मिट्टी	- 1:2:3
8. फाउन्डेशन पर प्लास्टर	- 1:3 (फौरन शुद्ध सीमेन्ट से घुटाई)
9. गोबर-घोल टंकी	- 1:3 (बनाना व प्लास्टर)

बायोगैस से संबंधित कुछ आश्चर्यजनक आंकड़े

1. बायोगैस संयंत्र में गैस निर्माण प्रक्रिया में केवल एक चौथाई गोबर ही उपयोग में लाया जाता है, परंतु उत्पादित गैस की गरमी (आंच) सीधे उपले जलाने की अपेक्षा 20 प्रतिशत अधिक होती है। ऐसा मुख्यतः इसलिए होता है कि गैस की ऊष्मीय या तापीय क्षमता बहुत अधिक (60 प्रतिशत) होती है जबकि उपलों से बहुत कम ऊष्मीय क्षमता (केवल 11 प्रतिशत) प्राप्त होती है।

2. गोबर गैस संयंत्र से प्राप्त खाद की मात्रा साधारण खाद की अपेक्षा 43 प्रतिशत अधिक प्रभावी होती है, क्योंकि डाइजेस्टर से गोबर अल्प मात्रा से नष्ट होता है, जबकि साधारण खाद बनाने में गोबर के अधिकांश तत्व नष्ट हो जाते हैं।

3. 1 किलोग्राम गोबर में 1.4 घन फुट गैस प्राप्त होती है।

4. भोजन आदि पकाने के लिए प्रति व्यक्ति 8 से 10 घन फुट गैस पर्याप्त होती है।

5. गोबर गैस लैम्प प्रति घंटा 5 घन फुट गैस की खपत करते हैं।

6. गोबर गैस लैम्प से पेट्रोल तथा डीज़ल चलाए जा सकते हैं। इन इंजनों में लगभग 15 घन फुट प्रति घंटा हॉर्स पावर की खपत होती है।

7. वर्ष भर में 70 घन फुट संयंत्र से 7 गाड़ी खाद प्राप्त होती है जिसमें 100 कि. ग्रा. यूरिया, 36 कि.ग्रा. पोटाश तथा 36 कि.ग्रा. फॉस्फोरस होता है।

8. यह खाद जमीन को उपजाऊ बनाने में कम्पोस्ट से अधिक उपयोगी है।

बायोगैस संयंत्र के प्रयोग में उपयोगी सुझाव

प्रारंभ में संयंत्र को लबालब न भरें बल्कि स्लरी निकलने की नाली से एक फुट नीचे तक भर कर छोड़ दें और तब तक मुख्य गैस वाल्व बंद रखें जब तक गैस के दाब से स्लरी ऊपर न उठ जाए।

1. बर्नर अच्छे किस्म का लगाएं। इसे सदा साफ रखें।

2. लैम्प में 100 सी.पी. का मेंटल लगाएं।

3. पाइप से कभी-कभी पानी और कचड़ा निकालते रहें।

4. संयंत्र की स्लरी को हिलाते रहें।

5. संयंत्र में अधिक गोबर न होने दें।

6. नियमित गोबर की फीडिंग अवश्य करें।

7. लैम्प को जलाते समय गैस ज्यादा न खोलें।

8. संयंत्र में साबुन व पानी न जाने दें।

9. डोम तथा इनलेट-आउटलेट ढके रखें।

10. बरसात में संयंत्र में पानी न जाने दें।

11. लैम्प की भी सफाई करते रहें।

12. पाइप के जोड़ों की जांच करते रहें। रसोई से अधिक दूरी होने पर मोटा पाइप प्रयुक्त करें।

13. गोबर के साथ मिट्टी तथा चारा, भूसा न जाने दें।

14. डाइजेस्टर में गोबर के घोल (स्लरी) पर बनी मोटी परत को तोड़ने का प्रयास करें।

15. एक वर्ष बाद गोबर गैस खोलकर संयंत्र में स्लरी का तल सही रखें। गोबर ज्यादा होने पर निकाल दें।

16. गर्मी में गोबर तथा पानी का अनुपात 4:5, जाड़े में 4:4, बरसात में 5:4 रखना चाहिए।

17. गोबर का घोल अच्छा बनाएं।

18. जाड़ों में गोबर और पानी को धूप में कुंडी (हौदी) में रखें। 4-5 घंटे के बाद दोपहर में घोलें।

19. संयंत्र को पूरी खुराक दें।

20. संयंत्र को रात्रि में कम से कम 8 घंटे आराम दें।

21. दस-बारह दिन में दो बाल्टी पशु मूत्र डालने से गैस तेजी से बनती है।

22. गैस सीधे नाक में न जाए।

23. माचिस की तीली जलाकर ही लैम्प या बर्नर की गैस खोलें।

24. मुख्य गैस द्वार (डोम के ऊपर) पर कभी आग से परीक्षण नहीं करना चाहिए।

25. रसोई में सड़े अंडे की महक महसूस हो, तो फौरन खिड़कियों खोल दें, मेन वाल्व बंद कर दें, कोई जलती चीज न ले जाएं।

26. कभी संयंत्र में घुसने का प्रयास न करें।

निर्माण संबंधी कमियां

1. कच्चा गड्ढा खोदते समय सही गहराई और व्यास का ध्यान न रखना।

2. इनलेट और आउटलेट गड्ढे के साथ-साथ न खोदना तथा चिनाई भी साथ-साथ न करना।

3. इनलेट तथा आउटलेट सही नाप के न बनाना तथा निकास-द्वार उचित ऊँचाई पर न काटना।

4. गैस पोर्शन का दोषपूर्ण बनना। सही नाप न रखना।

5. डोम की ढलाई सही तरीके से न करना। छत और गैस पोर्शन का प्लास्टर एक साथ न करना।

6. नाली द्वारा चिनाई का दोषपूर्ण हो जाना। नाली पूरी भर देना।

7. साफ स्थान पर मसाला न बनाना। उचित अनुपात का मसाला न लगाना। सीमेन्ट की बचत करना।

8. अच्छी सीमेन्ट तथा बालू का उपयोग न करना। बालू की छनाई आवश्यक है।

9. अच्छी ईंट का प्रयोग न करना। प्रथम श्रेणी की ईंट होनी चाहिए।

10. सभी नापों को सही न रखना। नापों का ज्ञान न होना।

11. नींव सही न डालना, कुटाई में कमी रखना, मिट्टी का साफ न होना।

12. संयंत्रों को ठेके पर बनवाना। कार्य जल्दी करने में कोई न कोई कमी रह जाती है।

13. प्रशिक्षित राजमिस्त्रियों से न बनवाना।

14. स्थल का दोषपूर्ण चुनाव करना। बरसात के पानी से बचाव न रखना।

15. संयंत्रों की तराई न करना। डोम पर भीगे बोरे न डालना।

16. डाइजेस्टर की दीवारों के बाहर मिट्टी की भराई-चिनाई एक दिन सूखने पर न करना।

17. जल स्तर ऊंचा होने पर नींव में सरिया प्रयुक्त न करना।

18. जानवरों की संख्या के अनुसार संयंत्र की क्षमता का चयन न करना।

19. नींव में मिट्टी और मसाले का अनुपात मिट्टी के प्रकार के अनुसार न रखना।

20. संयंत्र का भूमि से ऊपर होने पर चारों तरफ चबूतरा न बनाना। डाइजेस्टर फट सकता है।

संचालन तथा रख-रखाव संबंधी कमियां

1. पाइप का ढाल सही न रखना। ढाल संयंत्र की ओर होना चाहिए।

2. पाइप में लीकेज होना। चूड़ियां सही बनी होनी चाहिए।

3. क्षमता के अनुसार प्रतिदिन गोबर न डालना। गैस कम मिलती है।

4. प्रारंभिक भराई में अधिक गोबर और पानी भर देना।

5. गोबर और पानी का घोल सही न बनाना। न अधिक गाढ़ा और न अधिक पतला।

6. गोबर और पानी का अनुपात सही न रखना। पानी बराबर मात्रा में मिलना चाहिए।

7. पाइप के पानी को हटाना। अवरुद्ध हो जाने से गैस चूल्हे तक नहीं जा सकेगी।

8. स्लरी को न हिलाना। हिलाने से जीवाणु सक्रिय रहते हैं।

9. गोबर के साथ चारा आदि जाने देना, पाइप चोक हो जाता है।

10. इनलेट और आउटलेट न ढकना। मिट्टी जा सकती है तथा ऑक्सीजन से संपर्क होता रहता है।

11. यूरिया या कार्बाइड आदि मिलाना। पी.एच. प्रभावित होता है।

12. प्रारंभ की गैस न निकालना। कार्बन डाई-ऑक्साइड अधिक होने से जलता नहीं है।

13. डोम के ऊपरी भाग को डोम से न ढकना। क्रैक भी हो सकता है।

14. बाढ़ का पानी संयंत्र में चला जाना। गैस बननी बंद हो जाती है।

15. गोबर डालना कुछ समय के लिए बंद कर देना। गोबर नीचे बैठने लगता है जिससे सिल्टिंग हो जाती है।

□

6

बायोमास ऊर्जा

बायोमास ऊर्जा का अथाह भंडार है। प्रत्येक वृक्ष/पौधा एक छोटा-सा बिजलीघर है। पौधे सौर ऊर्जा का उपयोग प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया द्वारा अपना भोजन बनाने के लिए करते हैं। जो पौधे कार्बनिक पदार्थ बनाते हैं, वे पशुओं तथा मानव के भोज्य पदार्थ के रूप में इस्तेमाल किए जाते हैं। पौधों में प्रकाश-संश्लेषण के माध्यम से सारे संसार के स्थलीय और जलीय पादपों में एक वर्ष के अंदर 200 बिलियन टन कार्बन स्थिर की जाती है जिसमें अंतर्निहित ऊर्जा शक्ति 3000 बिलियन गीगाजूल आंकी गई है। सूर्य की किरणें जल और कार्बन डाई-ऑक्साइड को कार्बनिक पदार्थ के रूप में परिवर्तित कर देती हैं। यह परिवर्तित पदार्थ ही बायोमास है। प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया के प्रमुख उत्पाद कार्बोहाइड्रेट होते हैं किंतु इनके अतिरिक्त प्रोटीन, वसा, सेल्यूलोस और हाइड्रोकार्बन आदि के रूप में भी सौर-ऊर्जा एकत्रित होती रहती है। अनेक प्रकार की वनस्पतियों, खेती की फसलें, पेड़-पौधे सभी बायोमास निर्मित करते हैं।

बायोमास ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने के सबसे आसान तरीका है। इसे सीधे दहन करने/कार्बनीकरण/तरलीकरण, गैसीकरण तथा अन्य रूपांतर प्रणालियों के माध्यम से ठोस, तरल तथा गैसीय रूपों में प्रयुक्त किया जा सकता है। बायोमास से संबंधित कई कार्यक्रम देश में चलाए जा रहे हैं। लगभग 1100 हेक्टेयर भूमि पर ऊर्जा उत्पादन में काम आने वाले वृक्ष या झाड़ियों को लगाया गया है। बायोमास का उपयोग देश के विभिन्न भागों में काष्ठ ऊर्जा, पेट्रो-स्थानापन्न, एल्कोहॉल, ईंधन बिक्रेट, चारकोल उत्पादन, पप्पन तथा विद्युत्-उत्पादन के लिए सफलतापूर्वक किया गया है।

ऊर्जा-फसलें

आज यह अनुभव किया जा रहा है कि जिस तरह अनाज, सब्जी, फलों

आदि के लिये खेती की जाती है उसी तरह बायोमास की खेती की जाए। इसीलिए कभी-कभी ऊर्जा की खेती जैसे शब्दों का प्रयोग भी किया जाता है। ऐसे पौधे जिनमें अधिक ऊर्जा देने की क्षमता है उनमें गन्ना, ज्वार, यूफोर्बिया, कसावा, सोयाबीन, सूरजमुखी, ईंधन की लकड़ी वाले पौधे, नेपियर घास और जलकुंभी प्रमुख हैं। यूफोर्बिया, मदार जोजोबा आदि से अनेक प्रकार के पदार्थ, जैसे-वनस्पति-रबड़ क्षीर, रेज़िन, हाइड्रोकार्बन आदि प्राप्त होते हैं, जो रासायनिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सक्षम हैं। कुछ पौधों से दूध-जैसा या रबड़क्षीर द्रव (लैटेक्स) मिलता है जो डीज़ल के स्थान पर उपयोग में लाया जा सकता है। अब लकड़ी के आंशिक आसवन में कई अन्य ईंधन गैसें (मेथेनोल) आदि तैयार की जा सकती हैं। इन पौधों (ऊर्जा-पादपों) के कारण कृषि की भूमि घिर जाने की भी समस्या नहीं है, क्योंकि इन्हें ऊसर, बंजर, अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में उगाना संभव है। इन भूमियों पर सुबबूल, आस्ट्रेलियन बबूल, कैजुअराइना आदि शीघ्रता से उगने वाली किस्मों के पेड़ लगाए जा सकते हैं। यूफोर्बिया की उचित विधि से की गई खेती से प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष लगभग 2.5 बैरेल हाइड्रोकार्बन ऑयल की उपलब्धि संभव है। कुछ पौधे खाद्योपयोगी न होते हुए भी औद्योगिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक हैं, जैसे-महुआ, नीम, कुसुम, साल आदि। इनका उपयोग साबुन और वसा-अम्लों के निर्माण में होता है।

शीघ्र उगने वाले पौधों से भूमि के निश्चित क्षेत्रफल से अधिक मात्रा में बायोमास मिल सकता है। शीघ्रता से बढ़ने वाले इन पौधों में पॉपलर, सदर्न बीच, एल्डर, विलो और सफेदा (यूकेलिप्टस) आदि प्रमुख हैं। सुबबूल (ल्यूसीना ल्यूकोसेफैला) जिसे कि मिरेकल ट्री, वन्डर ट्री नाम से जाना जाता है। लवणीय, पथरीली तथा पहाड़ी मिट्टियों में भी लगाया जा सकता है। यह इमारती लकड़ी, ईंधन, पशुचारा आदि उपयोगों के लिए उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त यह कागज, गोंद, चारकोल रंग आदि बनाने में प्रयुक्त होता है।

जलीय बायोमास के रूप में जलकुंभी तथा शैवालों के नाम उल्लेखनीय हैं। जलकुंभी से एक हेक्टेयर से 150 टन वानस्पतिक पदार्थ प्राप्त हो सकता है। इसके एक किलोग्राम शुष्क भार से 350-400 लीटर जैवगैस (बायोगैस) प्राप्त की जा

सकती है। समुद्रों में अनेक प्रकार के शैवाल उगते हैं जिन्हें एकत्रित करके गैस बनाई जा सकती है। एक रिपोर्ट के अनुसार महाराष्ट्र के समुद्री तट में लगभग 3,000 टन शुष्क भार की घासें एकत्रित की जाती हैं।

बायोमास के अन्य स्रोतों में वनों तथा कृषि कार्यों से उपलब्ध होने वाले अपशिष्ट पदार्थ आते हैं। कृषि प्रधान देश भारत में कृषि अपशिष्ट और बायोमास ऊर्जा के भंडार पूरे देश में उपलब्ध हैं, और जब तक खेती होती रहेगी वे भी अपशिष्ट के रूप में उपलब्ध होते रहेंगे। कृषि जन्य अपशिष्ट पदार्थों की उपलब्धि कृषि-उत्पादों की मात्रा पर आधारित है। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार प्रति वर्ष होने वाले 204 मिलियन टन कृषि अपशिष्ट पदार्थों तथा जंगलों की सूखी पत्तियों, शाखों और छालों आदि के 3.3 मिलियन टन वन्य अपशिष्ट पदार्थों का उपयोग ऊर्जा संबंधी आवश्यकताओं के लिए सफलतापूर्वक किया जा सकता है। एक अनुमान के अनुसार पूरे विश्व में प्रतिवर्ष लगभग 600 करोड़ नारियल का उत्पादन होता है। इस नारियल को विभिन्न उपयोगों में लाने पर इससे नारियल अपशिष्ट भी भारी मात्रा में प्राप्त होते हैं, जो हमारे लिए पुनः उत्पादनीय ऊर्जा के अच्छे स्रोत बन सकते हैं। इन अपशिष्ट पदार्थों का गैसीकरण करके इनसे ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है।

हाइड्रोकार्बनों के स्रोत के रूप में पेट्रो-फसलों का उपयोग

हाल ही में वैज्ञानिकों का ध्यान वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत के रूप में हाइड्रोकार्बन रसायन उत्पन्न करने वाले पौधों की ओर गया है। यदि किसी ऐसे पौधे के विषय में पता लगाकर उसे परिवर्धित करके उसकी खेती कर ली जाए, जो हाइड्रोकार्बन रसायनों के समान अणुओं अथवा विशेष रूप से इसी आकार और प्रकार के अणुओं से युक्त द्रव दे सकता हो, जिसे द्रव हाइड्रोकार्बन ईंधन में परिवर्तित कर लिया जा सके, तो यह द्रव ईंधन प्राप्त करने और कदाचित पेट्रोलियम से उत्पन्न ईंधन को प्रतिस्थापित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा।

नई फसलों को उत्पन्न करने का एक प्रमुख कारण है आधुनिक सभ्यता की समाप्त हो जाने वाले स्रोतों पर अधिक निर्भरता है। इन अनोखी ऊर्जा फसलों की

आर्थिक संभावना निर्धारित करने के लिए रूढ़िगत खाद्य पदार्थों, भरण और रेशा फसलों से तुलना नहीं की जानी चाहिए। इस समस्या को दूर करने का एक परंपरागत तरीका संपूरक ऊर्जा के लिए अवशिष्ट और व्यर्थ पदार्थ इस्तेमाल करना है। लेकिन संसार की बढ़ती ऊर्जा आवश्यकता की आपूर्ति में और समुद्र फॉसिल ईंधन स्रोतों के मुकाबले में ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोत महत्वपूर्ण योगदान दे सकें, इसके लिए आवश्यक है कि ऐसी विशिष्ट फसलें विशेष रूप से उगाई जाएं और उनकी खेती की जाए। इन पद्धतियों को विकसित करने का सबसे सरल व्यावहारिक तरीका उस भूमि का उपयोग करना है जो आजकल इस्तेमाल में कम लाई जा रही हैं अथवा सामान्य कृषि के लिए पूर्णतः अनुपयुक्त हैं।

ऊसर धरती से वे स्रोत संपदा बिना किसी हानिकारक प्रभाव के प्राप्त करने की कुंजी वस्तुतः (शुष्क) अनुपजाऊ भूमि के पौधों के अपूर्व अनुकूलन, उत्पादन और कमियों की जानकारी की प्राप्ति है। आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण पौधे वे हैं जो अधिक अपचित कार्बनिक यौगिक, जैसे-रबड़, पैराफिन और अल्प अणुभार वाले हाइड्रोकार्बन उत्पन्न करते हैं। यद्यपि इनकी कुल उपज, सामान्य फसलों से कम है, परंतु ये पौधे शुष्क जैवमात्रा (बायोमास) की प्रति इकाई से अधिक ऊर्जा उत्पन्न करते हैं और इन्हें जल की भी अधिक आवश्यकता नहीं होती। इस प्रकार जैव ऊर्जा उत्पादन का सबसे तर्कसंगत तरीका यह है कि उन पौधों की खेती की जाए जो अधिक ऊर्जा के तेल और द्वितीयक पदार्थ उत्पन्न करते हैं।

जैवमात्रा से द्रव ईंधन उत्पन्न करने का सबसे अच्छा तरीका पादपों के निम्न अणुभार के अध्रुवीय (नॉन पोलर) अवयवों को सीधे ही निष्कर्षित करना है। इस पदार्थ को अपरिष्कृत जैव पदार्थ (बायोक्रूड) कहते हैं। यह द्रवों, ट्राइग्लिसराइड, मोम, टर्पिनॉएड, फाइटोस्टेरॉल तथा अन्य रूपांतरित आइसोप्रिनाएड यौगिकों का जटिल मिश्रण होता है जिन्हें उत्प्रेरित करके द्रव ईंधनों की तरह इस्तेमाल किया जा सकता है।

<u>ईंधन के लिए अपरिष्कृत-जैव पदार्थों का संसाधन</u>

पौधों की विशिष्ट जातियों-प्रजातियों के अपरिष्कृत जैव पदार्थों दो प्रकार

से प्राप्त किया जा सकता है : लैटेक्स या रबड़क्षीर निष्कासन के बाद स्कंदन (कोएगुलेशन) द्वारा अथवा जहां लैटेक्स निष्कासन संभव नहीं है, उचित विलायक के इस्तेमाल से शुष्क जैवमात्रा के निष्कर्षण द्वारा प्राप्त किए जा सकते हैं। अपरिष्कृत-जैव पदार्थों में प्रमुख हाइड्रोकार्बन-जैसे पदार्थ टर्पिनाएड, आइसोप्रिनॉएड, पौलिमर और दीर्घ श्रृंखला के ऐलिफोटिक पदार्थ होते हैं जो उत्प्रेरकी परिवर्तन के लिए अनुकूल क्रियाधार (सब्स्ट्रेट) के समान कार्य करते हैं। यद्यपि ज्ञात ऑक्सीजन के यौगिकों और कोयले से प्राप्त पदार्थों के हाइड्रोविऑक्सीजनीकरण पर कुछ अध्ययन किया गया है, परंतु परिवर्तन क्रियाओं के दौरान अपरिष्कृत-जैव पदार्थों के अवयवों के व्यवहार के विषय में बहुत कम जानकारी प्राप्त है। हाग और उसके सहयोगियों ने 1979-80 में मोबिल कारपोरेशन रिसर्च लैबोरेटरीज में मैजियोलाइट उत्प्रेरक के इस्तेमाल से यूफोर्बिया लेथाइरिस के सारसत्त के भंजन प्रतिमान (क्रैकिंग पैटर्न) का अध्ययन किया है। इन वैज्ञानिकों ने अन्य पदार्थों, जैसे-मक्का के तेल, कैस्टर तेल, जोजोबा तेल तथा हेविया ब्रासीलिएंसिल से प्राप्त रबड़ क्षीर के भंजन पर भी अनुसंधान किया है।

<u>भारतीय पेट्रोलियम अनुसंधान संस्थान में अध्ययन</u>

अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत विभाग द्वारा प्रायोजित भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून और राष्ट्रीय वनस्पति विज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ दोनों में संयुक्त रूप से किए जा रहे कार्यक्रम में महत्वपूर्ण पेट्रो-फसलों के प्रचलन, निरीक्षण तथा खेती और उनके पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बनों में परिवर्तन पर कार्य हो रहा है। एसक्लेपिएडेसी, एपोसाइनेसी, अर्टिकेसी (मोरेसी), कान्वल्वुलेसी और स्पॉटेसी प्रजातियों के अनेक पौधों का निरीक्षण करने के बाद विशिष्ट प्रजातियों द्वारा अपरिष्कृत जैव उत्पन्न करने के विषय में पता लगा लिया गया है। इन अध्ययनों से पेट्रो-फसलों के रूप में उपयोगी मुख्य पादपों की प्रजातियों का चयन कर लिया गया है। ये या तो जंगल में बहुतायत से मिलती हैं अथवा इनकी खेती सरलता से की जा सकती है।

भारतीय पेट्रोलियम संस्थान में विकसित उत्प्रेरक के उपयोग से अपरिष्कृत

जैव पदार्थों के दो नमूनों के हाइड्रो भंजन द्वारा 81 प्रतिशत द्रव-उत्पाद परिवर्तित कर लिए गए हैं, जिनमें से 70.6 प्रतिशत पदार्थ उपयोगी हैं। उत्पादों के आरंभिक विश्लेषण से ज्ञात हुआ है कि ये लगभग 24 प्रतिशत गैसोलिन, 22 प्रतिशत मिट्टी का तेल, 18 प्रतिशत गैस तेल तथा 6.6 प्रतिशत गैस प्रदान कर सकते हैं। पेट्रोलियम आधारित ईंधनों के स्थान पर इन द्रव-उत्पादों को उपयोग में लाने की संभावनाओं पर विचार करने के लिए इनका विस्तृत अध्ययन जारी है।

भविष्य में, परंपरागत खनिज कच्चे पदार्थों की कमी अथवा अल्पकालिक अप्राप्यता के कारण, हमें मूल्य की चिंता किए बिना, पुनर्नवीकरणीय स्रोत संपदाओं पर अधिक निर्भर रहना होगा। पौधों की प्रजातियों की कृषि प्रौद्योगिकी के मानकीकरण और जैव मात्रा की संभावना को सिद्ध करने के लिए अभी बहुत अनुसंधान होना बाकी है, जिससे इस नवीनतम प्रौद्योगिकी से उत्पन्न ईंधनों का इस्तेमाल वास्तविक रूप से किया जा सके। पादप प्रजातियों की जैव मात्रा संभावना के संदर्भ में ही नहीं बल्कि अपरिष्कृत जैव पदार्थों की मात्रा और गुण को सुधारने के लिए भी अनुसंधान होने चाहिए।

सारणी : संभावित पेट्रो-फसलें और उनका विवरण

क्र. सं.	पादप प्रजातियाँ	वितरण, जंगली
1.	बैलियोस्पर्मम मोनटेनम	उष्णकटिबंधीय तथा उपउष्णकटिबंधीय हिमालय, कश्मीर से भूटान तक और असम तथा मेघालय
2.	कैलोट्रोपिस जाइजेंटिया	भारत में सब जगह, हिमालय में 3000 फुट की ऊँचाई तक
3.	कैलोट्रोपिस प्रोसेरा	पश्चिमी तथा मध्यवर्ती भारत, पंजाब से बिहार तक, मुंबई और उत्तर प्रदेश में 3000 फुट ऊँचाई तक

क्र. सं.	पादप प्रजातियाँ	वितरण, जंगली
4.	क्रिप्टोस्टेजिया ग्रैंडीफ्लोरा	दक्षिणी पठार, मद्रास तथा बालाघाट, भारत के विभिन्न भागों में खेती
5.	यूफोर्बिया एंटीकोरम	बिहार, उड़ीसा, मुंबई, मद्रास और भारत के सभी गर्म भागों में
6.	यूफोर्बिया नेरीफोलिया	दक्षिणी पठार, चट्टानी भागों में सामान्यतः उपलब्ध, बंगाल, गुजरात और दक्षिण भारत में खेती
7.	यूफार्बिया निवूलिया	उत्तर-पश्चिमी हिमालय, सूखी चट्टानी पहाड़ियों पर, गुजरात और दक्षिणी पठार
8.	यूफोर्बिया रॉयलियाना	कुमाऊँ में शुष्क पहाड़ियों पर 6000 फुट ऊँचाई तक और राजस्थान में
10.	यूफोर्बिया तिरूकैलाइ	उत्तर-पश्चिमी भारत में खेती, बंगाल तथा दक्षिणी पठार में प्राकृतिक रूप से उपलब्ध
11.	यूफोर्बिया ट्राइगोना	दक्षिण में सूखी चट्टानी पहाड़ियों पर, बिहार, उड़ीसा, और अन्य भागों में

कृषि योग्य

1.	आर्जीरिया नर्वोसा	भारत में सब जगह
2.	न्यूफोर्बिया ऐंटीसिफिलीटिका	मेक्सिकन प्रजातियां
3.	पेडिलेंथस टिथाइमेलीएडेस	बाग में खेती योग्य

इनकी खेती भी सरलता से की जा सकती है।

बायोमास से बिजली

अनेक वर्षों से बिजली को बड़े पैमाने पर पैदा करने के लिए भाप के टर्बो/जेनेरेटरों का उपयोग किया जाता रहा है। मगर लगभग 10 किलोवाट के नीचे के स्तर पर भाप-टर्बाइन का इस्तेमाल महंगा भी पड़ता है और उसमें क्षमता भी कम होती है। इसके बजाए डीजन इंजन अथवा गैस-टर्बाइन प्रायः ज्यादा सस्ता पड़ता है। गैस-टर्बाइन लगाने में सस्ते होते हैं मगर इनकी कार्य कुशलता कम होती है, अतः इन्हें प्रायः दो स्थितियों में इस्तेमाल किया जाता है। आपात आवश्यकता तथा अधिक मात्रा में आवश्यकता के समय अथवा ऐसे अनुप्रयोगों में जहां बहुत मात्रा में अपशिष्ट गर्मी की आवश्यकता होती है। समस्त विश्व में और विशेष तौर पर विकासशील देशों में आज डीज़ल चालित बिजलीघर अधिक संख्या में चल रहे हैं। तेल की लगातार बढ़ती कीमतों के कारण वैकल्पिक ईंधनों का इस्तेमाल अधिकाधिक आकर्षक होता जा रहा है। ईंधन के रूप में बायोमास का इस्तेमाल करके बिजली उत्पादन की क्षमता 1-3 मेगावाट के आसपास हो सकती है।

सारणीः सूखे लिग्नीय पदार्थ की एक किलोग्राम मात्रा से बिजली का उत्पादन

युक्ति	बिजली (किलोवाट घंटों में)
गैसीफायर तथा रेसिप्रोकेटिंग इंजन	1.3
गैसीफायर तथा गैस-टर्बाइन	0.9
बॉयलर तथा भाप-टर्बाइन	0.9
मेथेन-संश्लेषण तथा रेसिप्रोकेटिंग इंजन	1.1
मेथेन किण्वन तथा रेसिप्रोकेटिंग इंजन	0.45

ग्रामीण लोग जैसे ही स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों का इस्तेमाल करके अपनी खपत से ज्यादा बिजली बनाने लगेंगे, वैसे ही गांवों में पैसे का आना बढ़ जाएगा। यदि उन्हें तेल के लिए पैसा खर्च करना होता है तो यही पैसा गांव से बाहर चला जाता है। स्थानीय बायोमास ईंधन निर्माण के साथ ऐसा नहीं होगा। यह एक सामान्य बात है कि लोग अपनी आमदनी का एक अंश दूसरे लोगों से खरीद-फरोख्त करने में खर्च करते हैं, और फिर यही पैसा उन दूसरों के लिए आमदनी बन जाता है। उसके बाद वे दूसरे लोग भी उस पैसे का कुछ हिस्सा और नए-नए सामान खरीदने अथवा सेवाओं को प्राप्त करने में खर्च कर देते हैं। अतः वह धन भी उसी गांव में घूमना शुरू हो जाता है और नई-नई आमदनियां बढ़ती जाती हैं। इस तरह बनी आमदनियों में दूसरे गांवों से आने वाली आमदनियां भी बढ़ती जाती हैं। अतः उनका अपना गांव खुशहाल होना शुरू हो जाता है। इसी चीज को अर्थशास्त्री 'गुणनकारी प्रभाव' कहते हैं।

बायोमास ऊर्जा प्रौद्योगिकी सरल है तथा ग्रामीण पर्यावरण के लिए उपयुक्त है। इन्हीं दो कारणों से एक जन आंदोलन बना सकने की इसमें भारी क्षमता है। फिलिपीन तथा दक्षिण अमेरिकी देशों में ऐसा पहले ही हो चुका है।

प्रौद्योगिकी विकास के लिए प्रोत्साहन

ग्रामीण जीवन, रहन-सहन का स्तर तथा क्रय शक्ति इन तीनों चीजों को कृषि-वन-ऊर्जा फसलों तथा सामाजिक वानिकी से सीधे ही परस्पर जोड़ा जा सकता है। वानिकी योजनाओं को अधिकाधिक प्रोत्साहन देने से किसानों को काफी आकर्षण मिलेंगे। स्थायी क्रम में बायोमास का उगाया जाते रहना एक आदर्श प्राथमिक ऊर्जा स्रोत सिद्ध होगा जिससे न केवल बिजली ही बल्कि ऊष्मा उत्पादन भी हो सकेगा। बायोमास से प्राप्त ऊर्जा सस्ती होती है। गैसीकरण प्रक्रिया द्वारा बायोमास से बिजली का बनाना सबसे महत्वपूर्ण तथा प्रदूषण रहित जैव परिवर्तन तंत्र है।

द्रवीकृत संस्तर-प्रौद्योगिकी (बेड टेक्नोलाजी) के सिद्धांत का अनुप्रयोग बायोमास ईंधनों के गैसीकरण में भी किया जा सकता है, जिसमें इन ईंधनों को ताप के उत्पादन में, बिजली बनाने में तथा संश्लिष्ट तरल ईंधनों के रसायनों के बनाने

में कारगर तरीके से इस्तेमाल किया जा सकता है। द्रवीकृत संस्तर तथा गैसीकरण की संकल्पना नई नहीं है परंतु बायोमास के इस्तेमाल में इन दोनों को सफलतापूर्वक जोड़ सकना एक नई बात है। यदि सही ढंग से डिज़ाइन किया गया हो तो बायोमास की दी गई किसी एक मात्रा से दहन युक्ति की अपेक्षा कहीं ज्यादा ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। साथ ही चूंकि यह उत्पाद एक ज्वलनशील गैस है जिसका अनुप्रयोग कई भिन्न भिन्न तरीकों से किया जा सकता है। जलाने की दृष्टि से डिज़ाइन की गई युक्ति में हमारा उद्देश्य यह रहता है कि अधिक से अधिक ईंधन को हवा की ऑक्सीजन से मिलाया जाए ताकि ताप पैदा हो। गैसीफायर में हमारा उद्देश्य होता है कि ऑक्सीजन के साथ कम से कम ईंधन मिलाया जाए-सिर्फ इतना कि इससे इतना ऊंचा तापमान बनाए रखा जा सके जो ईंधन को पाइरोलाइज करने भर के लिए काफी हो, यानी उन लंबी श्रृंखला वाले अणुओं को विघटित कर सकने के लिए, जिनके कारण लकड़ी की रेशागत संरचना बन पाती है। इन अणुओं के विघटन से एक गैस बनती है जिसमें मुख्यतः कार्बन मोनोक्साइड, हाइड्रोजन तथा मेथेन तथा एथिलीन जैसे गैसीय हाइड्रोकार्बन होते हैं। थोड़ी सी अतिरिक्त ऑक्सीजन मिला देने पर बचे खुचे कार्बन को कार्बन मोनोक्साइड में बदला जा सकता है। यह गैस ज्वलनशील है और इसे पाइपों द्वारा जहां चाहें वहां ले जाया जा सकता है।

अनेक उदाहरणों में, गैसीफायर को बॉयलर आदि के साथ निकट रूप से जोड़ा जा सकता है और लंबी पाइप लाइन की जरूरत नहीं होती मगर जहां बायलर, भट्ठा आदि संयंत्र के चारों ओर फैले होते हैं वहां पाइप लाइन द्वारा वितरण प्रणाली बिछा दी जाती है। गैस को गरम-गरम वितरित किया जाता है ताकि न तो संवेद्य गर्मी की हानि हो सके और न ही जल वाष्प का द्रवण हो। गैस को बॉयलरों पर लगे बर्नरों में सीधे ही इस्तेमाल किया जा सकता है। बर्नर एक दोहरी-ईंधन इकाई होती है जिसमें गैसीफायर से आने वाली निम्न बी.टी.यू. ईंधन को और / अथवा तेल अथवा प्राकृतिक गैस को जलाया जा सकता है। अधिक नमी वाले ईंधनों से पाइलट ज्वाला को जलती रखने के लिए कुछ तेल अथवा प्राकृतिक गैस की आवश्यकता होती है। प्रोड्यूसर गैस को सीधे ही भट्ठों-भट्ठियों अथवा बॉयलरों में पहुंचाया जा सकता है। चूंकि संपूर्ण दहन के वास्ते हवा की अधिक मात्रा चाहिए और चूंकि वायु

की उस अधिक मात्रा को सावधानीपूर्वक नियंत्रित किया जा सकता है इसलिए 1600° से. ताप की रूद्धोष्म (ऊष्मा की हानि हुए बिना) ज्वाला प्राप्त की जा सकती है। यह चूना-भट्ठियों तथा विकिरण बॉयलरों आदि के लिए विशेष महत्वपूर्ण है क्योंकि इनमें प्रणाली को इस प्रकार डिज़ाइन किया गया है कि विकिरण ऊष्मा का तथा तेल या प्राकृतिक गैस ज्वाला का उपयोग हो सके।

इस प्रकार ऐसी इकाइयों में पारंपरिक प्रणाली में बायोमास का संभरण करने के रूप में बायोमास प्रौद्योगिकी एक अच्छा अवसर प्रदान करती है। चूंकि बर्नर में प्रवेश करने से पहले गैस में से राख साफ की जा चुकी होती है इसलिए उत्पादित वस्तु का कम से कम संदूषण होता है।

बायोमास से मेथेनोल का उत्पादन

किसी भी हाइड्रोकार्बन गैस को विविध तरल रसायनों में परिवर्तित करने की दिशा में भली भांति सिद्ध हो चुकी तकनीकें आज उपलब्ध हैं। व्यापारिक दृष्टि से इनमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण हाइड्रोकार्बन मेथेनोल है। यह ऐसा एलकोहल है जिसे गैसोलीन (गैसोहॉल) की आपूर्ति (सप्लाई) को देर तक चलाने में इस्तेमाल किया जा सकता है या फिर विशेष तौर पर डिज़ाइन किए गए इंजनों में इसे सीधे ही इस्तेमाल किया जा सकता है। हाल ही में ऐसे प्रक्रम उपलब्ध होने लगे हैं जिनके द्वारा मेथेनोल से कृत्रिम गैसोलीन बनाई जा सकती है और जिसे मोटरगाड़ियों के अपरिवर्तित इंजनों में इस्तेमाल किया जा सकता है।

एक कृत्रिम गैस बनाने के लिए, जिसे तरल ईंधन में बदला जा सके, बायोमास गैसीफायर में वायु के बजाए ऑक्सीजन प्रविष्ट करानी आवश्यक है। यह ऑक्सीजन एक छोटे निम्नतापी संयंत्र से प्रदान कराई जा सकती है या एक बड़ी मात्रा में उत्पन्न करने वाले संयंत्र से पाइप लाइनों द्वारा दी जा सकती है। इस कृत्रिम गैस से तरल मेथेनोल के संश्लेषण से पहले उसे एक रिफॉर्मर तथा अन्य कई चरणों से होकर गुजारा जाता है। इन योजनाओं के आधार पर सामुदायिक बिजली-संयंत्र स्थापित किए जा सकते हैं जिनसे चाहे तो औद्योगिक इकाइयों को बिजली पहुंचाई जा सकती है या फिर कृषि, उद्योग तथा घरेलू इस्तेमाल के लिए कुछ सम्मिलित

गांवों की आवश्यकताओं के लिए समाकलित की जा सकती है। इन अत्यधिक लाभकारी सामाजिक योजनाओं से न केवल स्थानीय उत्पाद के इस्तेमाल हो सकने का एक माध्यम मुहैया कराया जाता है बल्कि तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी बिजली मुहैया की जा सकती है। ऐसा करने से ग्रामवासियों को लंबा समय लेने वाले बिजली-ग्रिडों की स्थापना पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा और साथ ही संप्रेषण में बिजली को हानि तथा देश के भीतर और बाहर से भी कोयला लाने ले जाने वाली निर्भरता से भी मुक्ति मिल जाएगी।

जब भी कोई नया उद्यमी किसी ग्रामीण अथवा शहरी क्षेत्र में कोई उद्योग शुरू करता है तो उसे सबसे पहला प्रहार बिजली की कटौती का सहना पड़ता है। कई उद्योग इसी से बैठ जाते हैं। उद्योगों के बंद हो जाने की उच्च दर का यही एक सबसे अधिक उत्तरदायी कारण है। उत्पादन में तो हानि होती ही है, जिससे राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पर बड़ा असर पड़ता है, लेकिन साथ ही रोजगार मिलने में कमी होना तथा उपयोगी सामान की उपलब्धता में भी कमी आ जाना अन्य विशेष हानियां हैं। इन सब बातों से नए उद्यमों को खोलने में संकोच और निरुत्साह का सामना करना होता है। हमारे देश में बिजली की कटौती से होने वाली हानि को पूरा नहीं समझा जाता। लोगों को इसकी एक आदत सी पड़ गई है और अर्थव्यवस्था से होने वाली हानि को हमेशा कम आंका जाता है। वैकल्पिक बिजली-स्रोत को न अपनाने की दिशा में कोई न कोई सफाई पेश की जाती है, जैसे कि यह कहना कि बायोगैस ऊर्जा-तंत्र बहुत ज्यादा महंगा है। महंगा होना मात्र एक आपेक्षिक शब्द है। जन स्तर पर बायोमास ऊर्जा तंत्र के अनुप्रयोग से एक आर्थिक उत्पादन-ढांचा तैयार हो सकेगा। बिजली न मिल पाने पर अन्य हानियों को देखते हुए यह बायोमास-ऊर्जा और भी ज्यादा किफायती सिद्ध होगी। हम अब तक ऐसे चरण पर आ पहुंचे हैं जहां बायोमास आधारित बिजलीघरों का न होना बहुत महंगा पड़ेगा - एक ऐसी चीज जिसे अब हमारा राष्ट्र वहन नहीं कर सकता।

वह समय आ गया है जब हमारे योजनाकारों को जहां भी संभव हो मानव समुदाय के लिए बायोमास आधारित बिजलीघरों को स्थापित करने की दिशा में पूरा

ध्यान लगाना होगा। हां, यह इस बात पर जरूर निर्भर होगा कि बायोमास का स्रोत और उपलब्धि कैसी है और बिजली की आवश्यकता कितनी है। बिजली की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कोयले का आयात न करके स्थानीय बायोमास से बिजलीघर स्थापित करना भारत में ऊर्जा-स्थिति के साथ ज्यादा तर्कसंगत है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर बायोमास - ऊर्जा प्रौद्योगिकी का प्रभाव

बायोमास-ऊर्जा प्रौद्योगिकी का राष्ट्रीय औद्योगिक विकास से बहुत बड़ा नाता होगा। इसके कारण यह तेजी से तो संपन्न होगा ही लेकिन साथ ही ग्रामीण उद्योग एक स्थान पर केंद्रित न होकर चारों तरफ फैलेंगे। इसके कारण देहात की नई उद्यमी शक्ति को प्रोत्साहन मिलेगा और फलतः ग्रामीण जीवन बहुत बेहतर होगा।

हमें बायोमास-ऊर्जा प्रौद्योगिकी को लाने का प्रभाव विभिन्न क्षेत्रों में देखने को मिलेगा - जंगलों के परिरक्षण तथा इससे होने वाले परिणामी लाभों के क्षेत्र में कृषि उत्पादन की वृद्धि में और उन करोड़ों-अरबों रुपयों वाली विदेशी मुद्रा बचत होगी, जिसे हमें आज तेल का आयात करने में खर्च करना पड़ता है। अनुमान है कि राष्ट्रीय स्तर पर उपलब्ध बायोमास की मात्रा 20 करोड़ टन प्रतिवर्ष है। इतने बायोमास से 10 करोड़ टन पाइरोलाइज्ड ठोस ईंधन प्राप्त होगा, जो 27.5 करोड़ बैरल तेल के तुल्य है।

ईंधनों और विदेशी मुद्रा की बचत

अनुमान लगाया गया है कि प्रति वर्ष 13.3 करोड़ टन ईंधन वाली लकड़ी की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त 7.3 करोड़ टन सुखाया गया गोबर जलाने के काम आता है। इसके स्थान पर बायोमास ईंधन इस्तेमाल करने से एक तो, तेजी से घटते जाने वाले वनों का संरक्षण होगा और दूसरे, गोबर का खाद के रूप में इस्तेमाल होकर खाद्य-उत्पादन में वृद्धि होगी। बायोमास द्वारा ऐसे विविध रसायनों का भंडार भी प्राप्त हो सकेगा जो फिलहाल पेट्रोलियम साधनों से प्राप्त होते हैं। जीवाश्मी (फॉसिल) स्रोतों के विपरीत बायोमास से मिलने वाली ऊर्जा ज्यादा साफ

सुथरी होती है और इसके व्यापक उपयोग से अधिक स्वच्छ पर्यावरण मिलेगा और पारितांत्रिक असंतुलन रूकेगा। इसके कारण काफी हद तक भूअपरदन की समस्या का भी समाधान होगा। घरेलू क्षेत्र में मिट्टी के तेल और गैसीफायरों में आयातित तेल के स्थान पर बायोमास ईंधन के इस्तेमाल से हमारी विदेशी मुद्रा के भारी खर्च का दबाव कम हो जाएगा, जो कि हमारी निर्यात आमदनी का लगभग 75 प्रतिशत है। यह मानकर कि उपलब्ध बायोमास को ठोस ईंटों (लगभग 10 करोड़ टन) में परिवर्तित कर लिया जा सकता है। यह मात्रा 8 करोड़ टन पेट्रोलियम उत्पादों के तुल्य होगी जिसका मूल्य 13,600 करोड़ रुपए होगा।

आज का अधिकांश बायोमास अपशिष्ट बिना इस्तेमाल किए यूं ही पड़ा रह जाता है और जो वास्तव में पर्यावरण का खतरा बन जाता है। इससे छुटकारा पाना भी अपने आप में एक समस्या है। यहां तक कि जल कुमुदनी (वाटर हायसिंथ) जैसे जलीय पौधे भी बायोमास ऊर्जा के उत्पादन में बहुत लाभकारी सिद्ध होंगे, जिन्हें अन्यथा एक प्रकोप ही समझा जाता है।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था का उत्थापन तथा बेरोजगारी की समस्या का समाधान

चूंकि यह एक ग्रामीण तथा कृषि आधारित उद्योग है, इसलिए इसके द्वारा ग्रामीण अर्थव्यवस्था में तेजी से विकास होगा। इससे गांवों के बेरोजगारों को रोजगार मिलेगा और यह उन्हें अपने गांव को छोड़ कर शहरों में जाने से रोकेगा। इससे ग्रामीण समुदाय आत्म-परिपूर्ण होगा और उन्हें अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं के लिए आत्मनिर्भरता प्राप्त होगी और साथ ही उनकी क्रय शक्ति बढ़ेगी।

बायोमास ऊर्जा का औचित्य

अन्य अपरंपरागत ऊर्जा साधन, जैसे कि सौर ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, पवन ऊर्जा और इन सबको प्राप्त कर सकने वाली युक्तियां महंगी हैं। अतः देश की तात्कालिक ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जन स्तर पर इनका अनुप्रयोग हो सकना संभव नहीं है। जन-अनुप्रयोग के लिए इन प्रौद्योगिकियों को परिशुद्ध कर लेने में समय लगेगा। बायोमास ऊर्जा कभी न समाप्त होने वाली ऊर्जा है। बायोमास

का निर्माण पौधों में होने वाली प्रकाश-संश्लेषण की जटिल प्रक्रिया के द्वारा होता है जिसमें पौधे सौर ऊर्जा तथा वातावरण की कार्बन डाईऑक्साइड का इस्तेमाल करते हैं। इसके विपरीत फॉसिल ईंधनों के भंडार घटते जा रहे हैं और वास्तव में ऐसा भय है कि वर्तमान ज्ञात फॉसिल ईंधन अगले लगभग केवल चार दशकों तक ही चल पाएंगे। बायोमास प्रौद्योगिकी में स्थानीय साधनों पर निर्भर रह कर प्रगति की जा सकती है और यह हमारे वैज्ञानिकों तथा प्रौद्योगिकीविदों को एक उत्कृष्ट अवसर प्रदान करती है। इसमें विशाल क्षमता है जो अर्थव्यवस्था में ऊर्जा क्षेत्र की तात्कालिक और आपात्कालिक कमियों को पूरा कर सकती है।

कुछ चुने हुए पौधों का शुष्क बायोमास उत्पाद और समतुल्य ऊर्जा

पादप जाति (स्पीशीज)	शुष्क बायोमास उत्पाद (टन/हेक्टेयर वर्ष)	समतुल्य ऊर्जा (गीगाजूल/हे. वर्ष)
मीठा ज्वार	20	335
विदेशी ज्वाद चारा	68.7	1250
जलकुंभी	154	2680
गन्ना	112	2000
3 वर्ष पुराने संकर पॉपलर	20	342
झाड़ीनुमा पादप, 2 वर्ष पुराने	8.3	144
यूकेलिप्टस स्पीशीज	39.1	680
शैवाल	88	1460
कैजुराइना या झाऊ	200	4950
सुबबूल	100 घन मीटर प्रति हेक्टेयर वर्ष	4600

ऊर्जा वृक्ष

जाति (स्पीशीज)	लकड़ी का घनत्व	कैलोरीमान (कैलोरी/ग्राम)	सीने की ऊंचाई पर व्यास (सेंटीमीटर)	ईंधन के लिए आयु (वर्ष)
एकैसिया निलोटिका	0.806	4946	12.0	15
एन्थोसेफैलस चाइनेन्सिस	0.498	4800	18.5	20
डलबर्जिया सिसो	0.779	5180	12.9	15
यूकेलिप्टस ग्रैंडिस	0.700	4900	19.4	13.5
यूकेलिप्टस टेरेटिकोर्निस	0.700	4800	7.0	6
टेक्टोना ग्रैंडिस	0.664	5535	9.4	15
		झाड़ीनुमा फसलें		
एकैसिया केटचू	1.005	5244	13.5	30
एनोगैइंसस लैटिफोलिया	0.935	4909	12.1	30
डायोस्पाइरॉस मेलैनोजाइलॉन	0.826	5030	12.8	30
ईगल मारमेलॉस	0.907	4495	10.7	30
लैगरस्ट्रीमिया पारवीफ्लोरा	0.749	4885	12.7	30
लॉनिया कोरोमैन्डेलिका	0.584	4933	13.2	30
मधुका लैटिफोलिया	0.915	5224	10.7	30
यूजीनिया ऊजेइनेन्सिस	0.846	5178	10.0	30
टेरोकार्पस मार्सुपिअस	0.796	5141	14.09	30
क्वयेरकस स्पीशीज	0.948	4633	25.7	30
शोरिया रोबस्टा	0.878	5433	17.8	30

जाति (स्पीशीज)	लकड़ी का घनत्व	कैलोरीमान (कैलोरी/ग्राम)	सीने की ऊंचाई पर व्यास (सेंटीमीटर)	ईंधन के लिए आयु (वर्ष)
		प्राकृतिक वन		
एनोगेइसस पेन्डुला	0.946	4739	8.5	30
बोसवेलिया सेरेटा	0.580	5169	13.8	30
सेड्रस देवदारा	0.548	5076	42.7	80
पाइनस एक्सेल्मा	0.507	4995	46.2	90
पाइनस राक्सबर्घी	0.541	4967	41.4	80
क्वयरकस स्पीशीज	0.948	4633	16.8	30
शोरिया रोबस्टा	0.878	5433	26.4	85

7

पवन-ऊर्जा

ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों में पवन-ऊर्जा का सस्ती और आसानी से सर्वत्र सुलभ होने के कारण उल्लेखनीय है। वायु-शक्ति आजकल इतनी लोकप्रिय नहीं है जितनी लगभग 50 या 100 वर्ष पहले थी। प्राचीन काल से ही वायुशक्ति का प्रयोग विभिन्न कार्यों को संपादित करने में होता रहा है। कहा जाता है कि सर्वप्रथम पवन-चक्कियाँ फारस में छठी शताब्दी में स्थापित की गई थीं। तब से आज तक पवन-चक्कियों के विकास में आशातीत वृद्धि हुई है। यूरोप के अनेक भागों में पवनचक्कियाँ सामान्य थीं और ग्रामीण क्षेत्रों में खपत की जाने वाली ऊर्जा में इन मिलों का काफी योगदान था। उन्नीसवीं शती के अंत तक नीदरलैंड और डेनमार्क में इन पवन-चक्कियों की संख्या क्रमशः 10,000 और 30,000 पहुँच चुकी थी। बीसवीं शताब्दी के मध्य तक अमेरिका में कई पंखों वाली विकसित पवन-चक्कियां प्रमुखतः जल खींचने के लिये लगाई गईं, जिनकी संख्या 60 लाख के करीब थी। वर्तमान समय में भी कुछ विकासशील देशों में कपड़े, लकड़ी व लोहे की सहायता से निर्मित पवन-चक्कियों का उपयोग विभिन्न कार्यों के लिये किया जाता है।

पृथ्वी के पर्यावरण में हवा निरंतर गतिमान रहती है। पृथ्वी पर बहने वाली इस वायु में लगभग 2700 टेरावाट ऊर्जा होती है। अनेक देश पवन ऊर्जा की संभावनाओं पर निरंतर शोध कर रहे हैं। ब्रिटेन में पवन ऊर्जा वहां के सभी विद्युत् केंद्रों से प्राप्त होने वाली ऊर्जा से 6 गुनी अधिक है। भारत में भी पवन-ऊर्जा की असीम संभावाएं हैं। यहां पर भी अब इस दिशा में प्रयास किए जा रहे हैं। ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों पर विचार करने हेतु गठित संयुक्त राष्ट्र संघ के एक आयोग के अनुसार वायु-ऊर्जा का सफलतम उपयोग ग्रामांचलों में जल सुलभ कराने के लिए वहां के घरों तथा सुदूर इलाकों में विद्युतीकरण के लिए और विशाल मेगावाट आकार की पवन-टरबाइनों द्वारा विद्युत् उत्पादन के लिये किया जा सकता है।

पवन-ऊर्जा की दिशा में निरंतर प्रगति के ही फलस्वरूप आज यह ऊर्जा के अन्य परंपरागत स्रोतों में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। एक रिपोर्ट के अनुसार 10,000 किलोवाट क्षमता वाली पवन टरबाइनें अब व्यापारिक स्तर पर 1000-2000 डॉलर प्रति किलोवाट की दर पर उपलब्ध है। यह खर्च डीज़ल जनित्रों द्वारा होने वाले व्यय की तुलना में अभी भी कम है। साथ ही यह भी आशा है कि आगामी दो दशकों में होने वाली खोजें इस व्यय को और भी कम कर देंगी।

भारत में पवन-ऊर्जा की बहुत संभावनाएं हैं। इससे 20,000 मेगावाट बिजली तैयार हो सकती है। विश्व बैंक तथा अमेरिका के ऊर्जा विभाग द्वारा हाल में किए गए सर्वेक्षण के अनुसार ऐसे 29 देशों में जहां अन्य देशों की तुलना में हवा की अधिक महत्वपूर्ण भूमिका है, भारत अग्रणी स्थान रखता है। देश में मौजूद 5 पवन-फार्मों की उत्पादन क्षमता बढ़ाकर 4.40 मेगावाट कर दी गई और राज्यों के बिजली-ग्रिडों ने अपेक्षाकृत अधिक यूनिट बिजली प्रदान की। अब तक गुजरात, उड़ीसा, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और राजस्थान आदि में पवन-मॉनिटरिंग परियोजनायें शुरू हो चुकी हैं। गुजरात के ओखा, तमिलनाडु के तूतीकोरीन, उड़ीसा के पुरी और महाराष्ट्र में कुल मिलाकर लगभग 6 मेगावाट क्षमता वाली 6 पवन-फार्म योजनायें सफलतापूर्वक काम कर रही हैं। इन पवन-फार्मों से एक करोड़ यूनिट से ऊपर बिजली पैदा की जा चुकी है। दो हजार से अधिक पवन-पम्प लगाये जा चुके हैं जिनसे खेती और पीने के लिए पानी प्राप्त होता है। आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, मध्य प्रदेश और गोवा में 100 किलोवाट के औसतन आकार वाले यूनिटों पर आधारित दो मेगावाट पूर्ण क्षमता वाली परियोजनायें प्रारंभ की जा चुकी हैं।

वायु से ऊर्जा कैसे प्राप्त होती है?

बहते पवन के वेग में अत्यधिक ऊर्जा निहित होती है। पवन-चक्कियों द्वारा इसी ऊर्जा को प्राप्त करके अन्य प्रकार की ऊर्जाओं में परिवर्तित कर लिया जाता है। मूलतः पवन-चक्कियां वायु के गति से घूमने वाले लकड़ी के विशाल पंखों के घूर्णन और उनसे उत्पन्न शक्ति के सिद्धांत पर कार्य करती हैं। प्राचीन काल की पवन-चक्कियां लकड़ी और कपड़े के विशाल पंखों से निर्मित की जाती थीं।

आधुनिक युग में एल्युमिनियम के आविष्कार के फलस्वरूप पवन-चक्कियों के पंख अब इसी हल्की धातु से बनाए जाने लगे हैं। इसका बड़ा लाभ यह हुआ है कि जहां प्राचीन काल में वे भारी होने के कारण मंद वायु में सुचारू रूप से कार्य नहीं कर पाती थीं वहीं अब हल्की धातु से बनी होने के कारण वे मंद वायु की 60 प्रतिशत शक्ति को यांत्रिक ऊर्जा में परिवर्तित करने में सक्षम हैं। इनकी तकनीकी में एक अन्य परिवर्तन यह हुआ है कि अब पूर्व काल की अनुप्रस्थ चक्कियों के स्थान पर लंबवत् पवन-चक्कियों का आविष्कार हो गया, जिनकी कार्य कुशलता अपेक्षाकृत अधिक है। न्यू मेक्सिको में स्थापित एल्युमिनियम की दो पंखों वाली एक आधुनिक पवन-चक्की एक मिनट में 40 चक्कर घूमकर 200 किलोवाट बिजली उत्पन्न करने की क्षमता रखती है।

वायु से ऊर्जा प्राप्त करने में दो तकनीकी बाधाएं हैं - एक तो, वायु का अनियमित रूप से बहना और दूसरे, इसमें ऊर्जा का कम होना। वास्तव में सौर संग्राहकों से सौर ऊर्जा ग्रहण करने के लिए जितनी भूमि चाहिए उतनी ही मात्रा में वायु-ऊर्जा ग्रहण करने के लिए इससे 5 गुनी अधिक जमीन की आवश्यकता होगी। वायु-ऊर्जा छोटे पैमाने पर स्थानीय आवश्यकताओं के लिए उपयोगी होती है किंतु इसके योगदान को महत्वपूर्ण बनाने के लिए 100 किलोवाट और कई मेगावाट के बीच के संयंत्रों का विकास करना पड़ेगा। ऐसे संयंत्रों का अभी परीक्षण किया जा रहा है। भारतवर्ष में पवन-ऊर्जा के उपयोग पर संगठित अनुसंधान कार्य वर्ष 1952 में शुरू हुआ। इसकी प्रारंभिक संरचना अत्यधिक जटिल होने के साथ-साथ छोटे किसानों की पहुंच के बाहर थीं कालांतर में डच संस्था "ट्रूल" ने भारतीय संस्थान 'ऑरगेनाइजेशन ऑफ द रूरल पोअर" के सहयोग से पवन-चक्की का निर्माण स्थानीय उपलब्ध सामग्री से परियोजना के कारखाने कुसुम्ही कलां, जिला गाजीपुर में किया। यह पवन-चक्की मूल रूप से वायु वेग वाले क्षेत्रों के लिए सर्वथा उपयुक्त है। यह 2 से 5 प्रति सेकंड अर्थात् 9 किमी. प्रति घंटा के वायु-वेग पर चलना प्रारंभ करती है, जबकि पानी की गहराई 5 मीटर हो। यह पवन-चक्की 10 मीटर प्रति सेकंड से 36 कि.मी. प्रति घंटा के वायु वेग से चल सकती है। पवन-चक्की की जल उठाने की क्षमता वायु-वेग तथा जल की सतह पर निर्भर करती है, जो कि इस

प्रकार है - 4000 लीटर/घंटा (3 मी./सेकंड वायु वेग) से 26,000 लीटर/घंटा (9मी./सेकंड वायु वेग) जबकि जल की सतह 9.8 मीटर हो।

यदि वायु-शक्ति को ऊर्जा आवश्यकताओं हेतु महत्वपूर्ण योगदान देना है तो बड़े-बड़े वायु जेनरेटरों का निर्माण करना होगा। पंखे (ब्लेड) चलाने तथा इंजन नियंत्रण के अध्ययन हेतु अनुसंधान तथा विकास का सहारा लिया जा रहा है। एक मेगावाट की क्षमता वाली युक्तियों पर बल दिया जा रहा है। अक्टूबर, 1978 के परिसंवाद में संयुक्त राज्य अमरीका की एक प्रयोगशाला ने 17 मीटर ऊर्ध्वाधर अक्ष वाली मशीन की अभिकल्पना, निर्माण तथा परीक्षण संबंधित सामग्री प्रस्तुत की थी। नवीन संकल्पनाएं जैसे-पवन संकेंद्रक, विसारक तथा भ्रमिल जेनरेटर जो परिवात वायु गति को बढ़ाते हैं और जिसके परिणाम स्वरूप संपूर्ण प्रणाली में सर्वाधिक मूल्यवान वस्तु टरबाइन के आकार को कम करने आदि पर अधिक महत्व दिया जा रहा है। वर्तमान मूल्यांकन दर्शाते हैं कि छोटे पैमाने पर कार्य करने से उत्पादित विद्युत का मूल्य अधिक होगा। यद्यपि बड़े पैमाने पर पवन-चक्कियों का आविष्कार अनिश्चित है, फिर भी कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय और छोटे पैमाने पर इनका प्रयोग महत्वपूर्ण है।

हमारे देश में कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, राजस्थान और हिमालय के पर्वतीय प्रदेशों में पवन-चक्कियों का प्रयोग असीमित संभावनाओं से युक्त है। इन स्थानों में 20 से अधिक पवन-चक्कियां स्थापित हो चुकी हैं। तेज हवा के समय इन पवन-चक्कियों से 26 अश्व-शक्ति (हॉर्स पावर) के समान यांत्रिक ऊर्जा का उत्पादन संभव है। यह अवश्य है कि यह क्षमता हवा की गति, मौसम और स्थान भेद के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। अधिकांशतः इन पवन-चक्कियों का प्रयोग पानी खींचने के लिए किया जा रहा है। सौराष्ट्र में लगी 62 फुट ऊँची एक पवन-चक्की 24 घंटों में 60-65 फुट की गहराइयों से खींचकर 20,000 लीटर पानी जमा कर सकती है। पानी खींचने के अतिरिक्त इनका उपयोग अनाज कूटने व पीसने, लकड़ी काटने, करघा चलाने, बिजली पैदा करने और अन्य कुटीर उद्योगों में किया जा रहा है। जिन स्थानों पर हवा तीव्र वेग से बहती है वहां इनकी कार्यकुशलता आश्चर्यजनक

रूप से अधिक होती है। यही कारण है कि स्कॉटलैन्ड, इंग्लैंड, हालैन्ड, डेनमार्क जैसे तेज पवन वेग वाले देशों में ये चक्कियां अधिक लोकप्रिय रही हैं। इनसे विद्युत् प्राप्त करने के संबंध में अनुमान है कि 25 किलोमीटर प्रति घंटा हवा के वेग पर वर्तमान पवन-चक्कियों से ही 50 किलोवाट तक बिजली प्राप्त की जा सकती है। यद्यपि अभी विद्युत् उत्पादन की तकनीक न तो पूर्णतया विकसित है और न सरल किंतु केंद्रीय विद्युत् अनुसंधान संस्थान, बंगलोर में चल रहे प्रयोगों के फलस्वरूप शीघ्र ही भारतीय वैज्ञानिक भी तत्संबंधी सरल तकनीक विकसित कर लेंगे। डेनमार्क में आज भी सफलतापूर्वक पवन-चक्कियों से बिजली उत्पादित की जा रही है।

वायु-ऊर्जा के पक्ष में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि ऊर्जा का यह साधन सबसे सस्ता, सुलभ और प्रदूषण रहित है। पवन चक्कियों की तकनीकी में अब तक जो भी प्रगति हुई है उससे पर्यावरण-प्रदूषण का कोई भय नहीं रह गया है। प्रारंभ में वन्य जीवन के संरक्षकों को पवन-चक्कियों के विशाल पंखों में फंसकर पक्षियों के मरने की आशंका प्रतीत हुई थी किंतु अब तक के उपयोगों में कहीं भी इस प्रकार की दुर्घटना का उल्लेख नहीं मिला है। स्थानीय जलवायु पर भी इनका प्रभाव उतना ही निरापद है जितना कि स्वस्थ वृक्षों का। फिर भी शोर या ध्वनि प्रदूषण के मामूली खतरों से इंकार नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त पवन चक्कियों के टूट-फूट की दिशा में होने वाली कुछ सुरक्षात्मक समस्याओं की ओर ध्यान देना भी समीचीन होगा। □

8

ऊर्जा के अन्य स्रोत

8.1 भूतापीय ऊर्जा:

भूतापीय ऊर्जा वह ऊर्जा है जो पृथ्वी की चट्टानों, ज्वालामुखियों, गर्म जल-स्रोतों और भाप कुंडों में निहित रहती है। यह भूतापीय ऊर्जा इन्हीं प्राकृतिक वाष्पीय साधनों अथवा उष्ण शुष्क चट्टानों से उत्पादित की जा सकती है। प्राकृतिक वाष्प आर्थिक दृष्टिकोण से स्पर्धापूर्ण है किंतु स्रोतों का आधार सीमित है। इसका कारण यह है कि प्राकृतिक वाष्प प्राप्त करने के लिए कई भूवैज्ञानिक बातें एक साथ मिलने पर निर्भर हैं। ये हैं - उष्ण चट्टानों का होना, भूमिगत जल प्रणाली, अपारगम्य शैल जो वाष्प के संरक्षण हेतु ढक्कन का कार्य करें और अंतराल में दाब बनने दें आदि। भूतापीय ऊर्जा पोटेशियम के एक रेडियो ऐक्टिव समस्थानिक (आइसोटोप) तथा अन्य रेडियो ऐक्टिव तत्वों के विघटन से उत्पन्न होती है। यह गर्मी प्राकृतिक दशाओं में ज्वालामुखियों के अलावा, भाप तथा गर्म जल-स्रोतों के रूप में धरती से बाहर फूट पड़ती है।

हमारी पृथ्वी वास्तव में एक ऐसा ऊष्मा-स्रोत है जो करोड़ों वर्षों तक ऊष्मा देता रह सकता है। पृथ्वी की सतह का प्रति वर्ग मीटर लगभग 0.06 वाट ऊर्जा निरंतर विकिरित करता रहता है और इस प्रकार पूरी पृथ्वी के लगभग 2.2×10^9 किलोवाट घंटा ऊर्जा नष्ट होती रहती है। हमारे देश में भूतापीय ऊर्जा मुख्यतया गरम स्रोतों (चश्मों) या गीजर्स के रूप में मिलती है। अनुमान है कि ऐसे करीब 250 गरम सोते होंगे। इन गर्म धाराओं तथा गीजर्स का उपयोग करके छोटी बिजली उत्पादन इकाई लगाई जा सकती है।

ऐसे क्षेत्र जो ऊर्जा के उच्चतापीय भंडार हैं, संपूर्ण धरती के दस प्रतिशत क्षेत्र में पाए जाते हैं। ये क्षेत्र प्रशांत महासागर के तटीय भागों में अमेरिका से चाइल तक, प्रशांत महासागर के पश्चिमी हिस्से में न्यूजीलैन्ड से इन्डोनेशिया और जापान

तक, केन्या, युगांडा और इथियोपिया तथा भूमध्य सागर मेडिटेरेनियन सी के चतुर्दिक स्थित हैं। ज्वालामुखी क्षेत्रों से भूतापीय ऊर्जा अधिक सरलता से और कम खर्च पर प्राप्त की जा सकती है। इस दृष्टि से तीसरी दुनिया के देशों के लिए ऊर्जा का यह विकल्प प्रकृति का वरदान है क्योंकि वहां ज्वालामुखियों की कमी नहीं है।

निम्न ताप वाली भूऊर्जा के स्रोत अनेक प्रकार से हमारे लिए उपयोगी सिद्ध हुए हैं। प्रमुखतया इनका इस्तेमाल गर्म स्थान, घरों को गर्माने, जल-कृषि, पौधघरों को गर्म रखने, कार्बनिक पदार्थों को समुद्री जल और खारे पानी के लवण प्राप्त करने, मत्स्य संवर्धन आदि अनेक औद्योगिक कार्यों के लिए हो रहा है।

सर्वप्रथम सन् 1904 में इटली के लार्डरेलो नामक स्थान में विद्युत उत्पादन के लिए भूतापीय ऊर्जा की सहायता ली गई। यह ऊर्जा धरती की दरारों से निकलती भाप से प्राप्त की गई थी। अन्य देशों ने भी इसका अनुकरण शीघ्र ही किया। वर्ष 1980 तक संपूर्ण विश्व में प्राप्त की जा रही भूतापीय ऊर्जा की क्षमता 2.5 गीगावाट तक पहुंच चुकी थी। वैज्ञानिकों के अनुमान के अनुसार इस सदी के अंत तक वह सात गुनी बढ़कर 17.6 गीगावाट हो जाएगी। वर्तमान समय में अमेरिका, जापान और मैक्सिको भूतापीय ऊर्जा के दोहन में सबसे आगे हैं। इनके अतिरिक्त हंगरी, आइसलैन्ड, न्यूजीलैन्ड, रूस, इटली व कैलिफोर्निया में भी विभिन्न आवश्यकताओं के लिए भूतापीय ऊर्जा प्रयोग में लाई जा रही है।

भूतापीय ऊर्जा के दोहन की प्रक्रिया अधिकांश रूप से धरती के नीचे से वेधन ड्रिलिंग द्वारा तेल निकालने के समान ही है। इन्हीं छिद्रों के माध्यम से भूतापीय शक्ति स्थानांतरित करके धरती के ऊपर लाई जाती है। अब तक वेधन की यह प्रक्रिया पृथ्वी के नीचे केवल 3000 मीटर की गहराई तक ही आजमाई जा सकी है किंतु वैज्ञानिकों को विश्वास है कि सन् 2000 के अंत तक उन्नत तकनीकी द्वारा 5000 मीटर की गहराई तक छिपी हुई तापशक्ति का दोहन भी संभव हो सकेगा। यह संभावना इसलिए भी रूचिकर है कि गहराई के साथ-साथ तापमान में वृद्धि होती जाती है। अतः अधिक ऊर्जा प्राप्ति की संभावना को नकारा नहीं जा सकता। पृथ्वी में हजारों मीटर नीचे स्थित मैग्माओं में छिपी हुई ताप-ऊर्जा की मात्रा आज

लगभग उतनी ही मानी जा रही है जितनी कि समूची दुनिया में ज्ञात परंपरागत ऊर्जा स्रोतों की मात्रा।

भूतापीय ऊर्जा के सर्वाधिक क्षमता वाले स्थल वे हैं जहां जलरहित गर्म सूखी चट्टानों के ढेर पाए जाते हैं। सौभाग्यवश चट्टानों के ये भंडार सारे विश्व में जगह-जगह उपलब्ध हैं। इनसे ताप के दोहन की तकनीक यद्यपि अभी शैशवावस्था में ही है तथापि वैज्ञानिकों को इससे बहुत आशाएं हैं। ताप दोहन की इस तकनीक में चट्टानों में अपेक्षित गहराई तक छिद्र से ठंडा जल नीचे पहुंचाया जाता है और गर्म चट्टान से रिसता हुआ यह जल दूसरे छेद के माध्यम से पुनः ऊपर लाया जाता है। इस प्रक्रिया से प्राप्त की गई तापशक्ति की क्षमता यद्यपि अत्यधिक है तथापि बहुत खर्चीली होने के कारण बहुत उपयोगी नहीं सिद्ध हो पाई है। यहां एक बात विशेष ध्यान देने की है कि इस प्रक्रिया में चट्टानों की तापशक्ति जल्दी ही क्षीण होने लगती है। चूंकि इस विधि में उसी जल का बारंबार उपयोग होता रहता है, अतः जल व्यर्थ नष्ट नहीं जाता। पर्यावरण विशेषज्ञों की राय में इस विधि से पर्यावरण-प्रदूषण की संभावना भी कम है।

ज्वालामुखियों से संचित तापशक्ति के दोहन के मध्य अमेरिका का एलसल्वाडोर नामक गणराज्य अग्रणी कहा जा सकता है। आज यह देश अपनी विद्युत् संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तेल को छोड़कर पूर्णतया भूतापीय ऊर्जा पर ही निर्भर है। ऊर्जा प्राप्त करने के लिए इस विधि पर अन्य स्रोतों की अपेक्षा लागत भी कम आती है।

भारत में भी भूतापीय ऊर्जा के अगाध भंडार उत्तर-पश्चिमी हिमालय, पश्चिमी घाट, नर्मदा, सोनघाटी और दामोदर घाटी के क्षेत्रों में स्थित हैं। इस संबंध में भारत सरकार के भूविज्ञान सर्वेक्षण विभाग की एक रिपोर्ट (1973) के अनुसार जम्मू व कश्मीर, लद्दाख के कुछ क्षेत्रों से भूतापीय ऊर्जा प्राप्त करने की संभावनाओं के समाचार मिले हैं। भारत ने संयुक्त संघ के सहयोग से भूतापीय ऊर्जा के दोहन की नई परियोजना तैयार की है।

भूतापीय ऊर्जा के विरोध में सबसे बड़ी बात यह है कि इसके स्रोतों का

पुनर्नवीकरण संभव नहीं है। इसका मुख्य कारण यह है कि जिस गति से पृथ्वी के भीतर से इसका दोहन होता है उस गति से यह उत्पन्न नहीं होती, अतएव इस स्रोत की क्षमता बहुत सीमित हो जाती है। प्राकृतिक गर्म जल के स्रोतों का जीवनकाल सामान्यतया 10,000 वर्षों तक का हो सकता है। यद्यपि जैसे ही इस भाप या गर्म जल की तापशक्ति का अवशोषण प्रारंभ किया जाने लगता है वैसे ही इसकी जीवन अवधि घट कर बहुत कम हो जाती है। अन्य ऊर्जा स्रोतों की तुलना में यद्यपि भूतापीय ऊर्जा से होने वाला पर्यावरणीय प्रदूषण नगण्य है तथापि इसकी पूर्णतया उपेक्षा नहीं की जा सकती। इसके दोहन की प्रक्रिया में निकलने वाले क्लोराइड, सल्फेट, कार्बोनेट और सिलिका आदि के मिलने से धरातलीय जल के प्रदूषित होने की आशंका बनी रहती है। यह अवश्य है कि इनमें से कोई भी तत्व बड़े पैमाने पर विष के समान जानलेवा प्रभाव नहीं छोड़ता। छिद्रवेधन में की गई असावधानी से भी भूगर्भीय जलस्रोत और धरातलीय शुद्ध जल के एक हो जाने की आशंका रहती है। इनके अतिरिक्त सल्फरयुक्त गैसों के निष्कासन और गर्म जल के नदियों में मिल जाने की समस्याएं भी विद्यमान रहती हैं। किंतु यदि इस्तेमाल किया हुआ गर्म जल पुनः धरती के नीचे पहुंचाया जा सके तो जहां प्रदूषण की समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है वहीं जल स्रोत को फिर से परिपूर्ण करना भी संभव हो सकेगा।

भूतापीय ऊर्जा से वर्तमान संकट का संपूर्ण समाधान तो नहीं किया जा सकता किंतु किसी सीमा तक समस्या को कम अवश्य किया जा सकता है। आशा है कि भविष्य में भूतापीय ऊर्जा के दोहन की विकसित तकनीकों की सहायता से यह कार्य सुचारू रूप से संपन्न किया जा सकेगा।

8.2 समुद्री ऊर्जा

सागर में ऊर्जा की सबसे अधिक मात्रा सूर्य से प्राप्त होने वाली ऊष्मा ऊर्जा के रूप में भंडारित है और संसार के कुल सागरों में $3x10^{24}$ जूल आंकी गई है। इनकी लहरों में 10^{19} जूल, ज्वारभाटाओं में $2x10^{17}$ जूल, सतह पर बहने वाली पवनों में $3x10^{8}$ जूल और गहरे सागर की धाराओं में 10^{14} जूल ऊर्जा भंडारित समझी जाती है।

मानव इस ऊर्जा का उपयोग करने में प्राचीन काल से ही प्रयासरत रहा है। पर सागर से ऊर्जा प्राप्त करना इतना आसान नहीं है जिना कि खाद्य या खनिज पदार्थ प्राप्त करना, इसलिए आरंभ में, प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में वांछित प्रगति न होने तक, इस बारे में असफलता ही हाथ लगी। केवल पिछले कुछ दशकों में ही सागर से ऊर्जा प्राप्त करने में कुछ सफलता मिली है।

सागर में सबसे अधिक ऊर्जा उसके पानी में ऊष्मा के रूप में भंडारित है। सूर्य की किरणें पानी में बहुत गहराई तक प्रवेश नहीं कर पातीं। उनमें निहित अवरक्त और लाल किरणें, जो कि ऊष्मा पैदा करती हैं उनकी प्रवेशन-क्षमता अत्यंत कम है। इसलिए सूर्य से प्राप्त होने वाली ऊर्जा का अवशोषण पानी की ऊपरी परतों में ही हो जाता है। इसी प्रकार सागर की सतह का पानी काफी गर्म हो जाता है पर गहरे भागों का पानी ठंडा ही रहता है। इससे सागर में जल के ऐसे विभिन्न स्तर बन जाते हैं जिनके तापों में काफी अंतर होता है। यह अंतर अनेक बार 20° से. से भी अधिक हो जाता है। इसी तापांतर का उपयोग करके बिजली बनाने की तकनीक को कहते हैं - "सागर ऊष्मा ऊर्जा रूपांतरण तकनीक" (ओशन थर्मल एनर्जी कन्वर्जन - 'ओटेक')

भौतिकी की दृष्टि से 'ओटेक' तकनीक एक ऊष्मा इंजन की तरह है और इसका आधारभूत सिद्धांत वही है जो प्रचलित ताप-बिजली घरों का होता है। इस तकनीक में सागर की सतह के गर्म पानी और लगभग 1000 मीटर की गहराई से निकाले गए ठंडे पानी के तापों के अंतर का उपयोग करके बिजली बनाई जा सकती है। इस प्रकार यह तकनीक उष्ण कटिबंधीय सागरों के लिए बहुत उपयुक्त है क्योंकि इन सागरों की सतह के पानी का ताप 25° से.जितना ऊंचा होता है और 1000 मीटर गहरे पानी का -1° से. जितना नीचा। पर इसका यह अर्थ नहीं कि आर्कटिक या अंटार्कटिक जैसे हिमसागरों में ओटेक तकनीक काम ही नहीं कर सकती। यद्यपि इन सागरों के पानी का ताप 1° से. नीचा होता है परंतु आसपास की हवा का ताप इससे कहीं अधिक नीचा होता है। अतएव इस तापांतर का उपयोग ओटेक के लिए किया जा सकता है।

यह तापांतर सूर्य द्वारा उत्पन्न किया जाता है। इसलिए यह बहुत शीघ्रता से पुनः उत्पन्न हो जाता है। उसका उपयोग करके संपूर्ण विश्व के लिए बिजली बनाई जा सकती है। अनुमान लगाया गया है कि ओटेक तकनीक से 200,000,000 मेगावाट बिजली प्रति दिन प्राप्त की जा सकती है।

ओटेक संयंत्र के गर्म और ठंडे जलों के तापों में अंतर प्रचलित बिजलीघरों की अपेक्षा कम होता है। इसलिए उसकी दक्षता भी काफी कम होती है। प्रचलित ताप-बिजलीघरों की दक्षता लगभग 80 प्रतिशत होती है, पर ओटेक तकनीक की दक्षता मात्र 7 प्रतिशत (व्यवहार में यह दक्षता और भी घट जाती है) सागर में गर्म और ठंडे पानी की राशि इतनी अधिक मात्रा में उपलब्ध है कि ओटेक की अत्यंत कम दक्षता की पूर्ति हो जाती है।

ओटेक तकनीक में दो तरीकों-बंद चक्र और खुले चक्र से बिजली बनाई जाती है। बंद चक्र विधि में किसी द्रव को उबालकर गैस में परिवर्तित कर लिया जाता है। यह गैस टरबाइन चलाती है। इससे बिजली बनती है, पर इससे गैस स्वयं ठंडी हो जाती है और द्रव में बदल जाती है। इस द्रव को गर्म करके पुनः गैस में बदला जाता है। इस द्रव के गैस में परिवर्तित होने, गैस के टरबाइन चलाने और फिर ठंडी होकर द्रव में बदल जाने का चक्र चलता रहता है।

इस चक्र में द्रव के रूप में पानी का नहीं वरन् अमोनिया, प्रोपेन सरीखे कम क्वथनांक वाले द्रवों का उपयोग किया जाता है। पर सागर के गर्म पानी का उपयोग द्रव को गर्म करके उसे गैस में बदलने के लिए किया जाता है। बाद में सागर का ठंडा पानी गैस को पुनः द्रव में परिवर्तित कर देता है।

बंद चक्र विधि के लिए मुख्य रूप से पंपिंग व्यवस्था गुनगुने और ठंडे पानी के लिए अत्यंत विशाल पाइप आदि तथा कार्यकारी तरल के लिए प्लम्बिंग व्यवस्था की जरूरत होती है। साथ ही बड़े-बड़े वाष्पकों, कन्डेन्सरों, टरबाइनों तथा संबद्ध यंत्रों की आवश्यकता भी होती है।

दूसरे तरीके खुले चक्र तरीके में किसी कार्यकारी द्रव की जरूरत नहीं होती।

उसके स्थान पर सागर के गुनगुने पानी को ही कम दाब पर वाष्प में परिवर्तित कर लिया जाता है। यह भाप टरबाइन चलाती है। इसमें वह ठंडी हो जाती है। इस ठंडे जल को पुनः गर्म नहीं किया जाता बल्कि सतह पर से पुनः गर्म पानी ले लिया जाता है।

यद्यपि खुले चक्र तरीके में बड़ी मात्रा में ताजा पानी उपजात के रूप में मिल जाता है और उसके कई अन्य लाभ भी हैं, परंतु आमतौर से बंद चक्र तरीके को अधिक पसंद किया जाता है, उसकी उत्पादन क्षमता अपेक्षाकृत अधिक होती है।

ओटेक संयंत्र की स्थापना सागर में तिरते चबूतरे पर या तट पर, थल पर की जा सकती है। पहली स्थिति में सागर में एक विशाल तिरता चबूतरा बनाया जाता है और उसी पर ओटेक स्थापित किया जाता है। इस संयंत्र द्वारा बनाए जाने वाली बिजली को जलमग्न तारों द्वारा थल पर ले जाया जाता है। इस स्थिति में वे काम जिनके लिए बिजली बनाई जाती है, चबूतरे के निकट, तिरते जहाजों पर ही किए जा सकते हैं। अमोनिया, हाइड्रोजन और ऐलुमिनियम आदि का उत्पादन ऐसे कार्य हैं जिसके लिए बहुत बड़ी मात्रा में बिजली की जरूरत होती है। ये कार्य जहाजों पर किए जा सकते हैं। ऐसा करने से जलमग्न तारों से दूरस्थ स्थानों को बिजली ले जाने की जरूरत नहीं होती। इससे काफी बचत होगी।

सागर के तट पर स्थापित किए जाने वाले ओटेक संयंत्रों के लिए गुनगुना और ठंडा पानी बड़े-बड़े पाइपों द्वारा सागर से लाना पड़ता है। निश्चय ही ठंडा पानी सागर की गहराइयों में से लाना पड़ता है। इस प्रकार के संयंत्रों को स्थापित करने हेतु किसी नई खोज अथवा तकनीक की जरूरत नहीं पड़ती। वर्तमान प्रौद्योगिक ज्ञान के आधार पर ही उन्हें स्थापित किया जा सकता है। इसलिए इस प्रकार के संयंत्रों की स्थापना की आशा अधिक है।

ओटेक तकनीक बड़े पैमाने पर बिजली बनाने की एकदम प्रदूषण रहित तकनीक है। इस तकनीक में कोई हानिकारी उपजात नहीं बनता। साथ ही ओटेक संयंत्र से बिजली प्राप्त करने पर प्रचलित साधनों की अपेक्षा बहुत कम खर्च होता

है। पर इस संयंत्र के निर्माण और उसकी स्थापना पर बहुत अधिक लागत आती है। वास्तव में ये कार्य अत्यंत जटिल, श्रमसाध्य और महंगे हैं। ऐसे बड़े-बड़े चबूतरे बनाना जो सागर की लहरों और भयंकर तूफानों के थपेड़ों का मुकाबला कर सकें, आसान काम नहीं है। ये चबूतरे सागर से तेल निकालने हेतु बनाए जाने वाले चबूतरों की भांति ही कंक्रीट या इस्पात के बने होते हैं। पर इन चबूतरों के निर्माण से भी कहीं अधिक जटिल और श्रमसाध्य काम है-30 मीटर व्यास के 1000 मीटर लंबे पाइप बनाना और इन्हें लटकाना। ऐसे पाइपों को गहरे सागर से ठंडा पानी लाने के लिए चबूतरे से लटकाना पड़ता है। जरा सोचिए! 30 मीटर व्यास के 1000 मीटर पाइप में से पानी की कितनी विशाल मात्रा बह सकती है। 400 मेगावाट के एक ओटेक संयंत्र को पानी की इतनी ही मात्रा चाहिए। पानी की इतनी विशाल मात्रा संसार की सबसे बड़ी नदी नील नदी में बहती है। अब इतने बड़े पाइप को लटकाना और उस पर पड़ने वाले बलों के तथा समुद्री पानी और सागर के जीवों को जैवरासायनिक क्रियाओं के बावजूद सही स्थिति में बनाए रखना कितना जटिल काम है। लटकते पाइप का अपना ही वज़न बहुत अधिक होता है, फिर उस पर अनेक प्रकार के बल-उसमें से पानी के बहने के फलस्वरूप बल आदि विभिन्न किस्मों और परिणामों के बल-निरंतर प्रभावशील होते हैं। वास्तव में ये बल इतने प्रकार के होते हैं कि सब की अलग-अलग सही गणना कर पाना वैज्ञानिकों के लिए भी लगभग असंभव कार्य है। इतने विशाल पाइप बनाने और चबूतरे से उसे लटकाने संबंधी कठिनाइयों ने ही ओटेक संयंत्रों की स्थापना की गति को अत्यंत धीमा कर दिया है। वैसे पाइप निर्माण के लिए अब तक प्रबलित कंक्रीट, इस्पात, कांच, प्रबलित पॉलीमर, नायलोन आदि पदार्थ आजमाए जा चुके हैं।

इन्हीं कठिनाइयों को देखते हुए अनेक वैज्ञानिकों ने ओटेक संयंत्रों को तट के निकट थल पर स्थापित करने के सुझाव पेश किए हैं। ऐसा करने पर गहरे सागर से ठंडे पानी लाने के लिए कई किलोमीटर लंबे पाइपों की जरूरत होगी। परंतु ये पाइप सागर की तली पर पड़े रहेंगे। उन्हें सागर में स्थित तिरते चबूतरे में लटकाने की जरूरत नहीं होगी।

ओटेक संयंत्र में एक और बड़ी कठिनाई ऊष्मा विनिमय को लेकर आती है। इस संयंत्र की अत्यंत अल्प दक्षता को बनाए रखने हेतु यह जरूरी होता है कि गुनगुने पानी की अधिकतम ऊष्मा कार्यकारी द्रव को स्थानांतरित हो जाए और इस क्रिया में ऊष्मा ह्रास कम से कम हो। इसी प्रकार कार्यकारी द्रव से बिना किसी हानि के, अधिकतम ऊर्जा का ठंडे पानी को स्थानांतरित होना जरूरी है। वैसे इन क्रियाओं में ऊष्मा ह्रास को एकदम नहीं रोका जा सकता - उसे अत्यंत कम अवश्य किया जा सकता है।

ऊष्मा विनिमयक के रूप में स्टेनलैस इस्पात, कुप्रोनिकिल मिश्र धातुएं, ऐलुमिनियम, टाइटेनियम आदि सुझाए गए हैं और इस्तेमाल किए जा रहे हैं। वैसे सही ऊष्मा विनियमक पदार्थ का चयन आसान नहीं है। उसमें अनेक बाधाएं सामने आती हैं, यथा - जब कार्यकारी द्रव के रूप में अमोनिया का उपयोग किया जाता है तब कुप्रोनिकिल धातुओं का इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। यद्यपि अमोनिया का ऐलुमिनियम के साथ सही सामंजस्य बैठ जाता है पर ऐलुमिनियम को समुद्री सूक्ष्म जीव बहुत जल्दी वेध डालते हैं। टाइटेनियम हर दृष्टि से बहुत उपयुक्त ऊष्मा विनिमयक पदार्थ है, पर वह बहुत महंगा है। आजकल टाइटेनियम की बहुत पतली चादरों का ही प्रयोग किया जाता है।

एक बार सही ऊष्मा विनिमयक पदार्थ का चयन कर लेने के बाद समस्या आती है उससे सही प्रकार और आकृति के वाष्पक और कंन्डेन्सर बनाना इस बारे में काफी अध्ययन किए जा रहे हैं। इनमें पाया गया है कि ऊष्मा-विनिमय क्षमता बढ़ाने के लिए पात्रों की सतह को अत्यंत सूक्ष्म रूप से खुरदुरा कर देना बहुत उपयुक्त उपाय है।

ओटेक संयंत्र में हर घटक बहुत विशाल चाहिए - इतना विशाल कि अब तक उसकी कल्पना ही की जाती रही है वह बनाया नहीं जाता था। इसलिए घटकों के निर्माण और स्थापना हेतु बहुत बड़ी धनराशि चाहिए। इतनी बड़ी धनराशि जुटाना विकसित देशों के लिए कठिन हो जाता है। इसके बावजूद अनेक देश - संयुक्त राज्य अमेरिका, फ्रांस, जापान, ब्रिटेन और यहां तक हमारा देश भी ओटेक संयंत्र स्थापित

करने हेतु गंभीर प्रयत्न कर रहे हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि एक बार ओटेक संयंत्र स्थापित कर दिए जाने के बाद उससे बिजली उत्पादन की लागत अन्य बिजलीघरों की तुलना में बहुत कम आती है। उससे बहुत बड़े पैमाने पर इतनी सस्ती बिजली मिलने लगती है कि प्रचलित तरीके के बिजलीघरों की जरूरत ही नहीं रह जाती। साथ ही ओटेक संयंत्र में न तो प्रदूषण करने वाले पदार्थ निकलते हैं जिनको ठिकाने लगाना मुश्किल होता है और न ही किसी ईंधन की जरूरत होती है। उससे लगभग अनंत काल तक बिजली मिल सकती है।

भारत में ओटेक

हमारे तटवर्ती सागरों के विभिन्न जलस्तरों के तापों के अंतर ओटेक तकनीक से बिजली बनाने के लिए बहुत उपयुक्त हैं। अरब सागर और बंगाल की खाड़ी में आमतौर से सतह के पानी के ताप और लगभग 1000 मीटर गहरे पानी के ताप में 20° से. से भी अधिक अंतर है। हमारे अनुसंधान पोत "गवेषणी" द्वारा किए गए सर्वेक्षणों में पाया गया है कि बंगाल की खाड़ी की सतह पर गर्म पानी की 75 मीटर मोटी एक तह है। उसके पानी का ताप 29° से. है पर सतह से लगभग 120 मीटर नीचे ठंडा पानी है। उसका ताप 6° से. है। यह ओटेक संयंत्रों की स्थापना के लिए बहुत उपयुक्त है। तमिलनाडु के तट पर 4 ऐसे स्थानों का पता लगाया जा चुका है जहां ओटेक संयंत्र स्थापित किए जा सकते हैं।

विशेषज्ञों का मत है कि देश के पश्चिमी और पूर्वी तटों के निचले भागों तथा लक्षद्वीप और अंडमान द्वीप समूहों के तटों पर छोटे-छोटे 25 से 50 मैगावाट क्षमता के अनेक ओटेक संयंत्र स्थापित किए जा रहे हैं। ये बिजली की स्थानीय कमी को दूर कर सकते हैं। हमारे देश के मिनीकाय द्वीप में और तमिलनाडु के तट पर ओटेक संयंत्र स्थापित किए जा रहे हैं।

8.3 ज्वारीय ऊर्जा

सागर के क्षेत्र में प्राकृतिक रूप से होने वाली प्रक्रिया "ज्वार-भाटा" से ऊर्जा के निर्माण का कार्य शुरू किया जा रहा है। ज्वार के समय जल काफी तीव्र

वेग से बढ़ता है जिसमें अभूतपूर्व शक्ति होती है। यह शक्ति सागर तट के आस-पास की विभिन्न छोटी-बड़ी चट्टानों को तोड़ते हुए आगे बढ़ जाती हैं। इसी के साथ सागर में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के शैवाल तथा सीपियां इत्यादि भी काफी दूर तक चले जाते हैं। विशाल क्षेत्र में तीव्र वेग से बढ़ते जल को किसी भी प्रकार से रोक पाना असंभव हो जाता है किंतु ज्वार की अवधि के समाप्त होते ही यह विरामावस्था या भाटा में परिवर्तित हो जाता है। ज्वार की इसी शक्तिशाली क्षमता को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों ने इसे ऊर्जा-स्रोत की श्रेणी में रखते हुए "विद्युत ऊर्जा" उत्पादित करने में विशेष सफलता प्राप्त की है।

कुछ दशक पूर्व फ्रांस ने सागर के ज्वार में निहित ऊर्जा को बिजली में रूपांतरित करने हेतु सफल प्रयोग किया था। इस प्रकार का पहला बिजलीघर रांस की खाड़ी में अब भी कार्यरत है। उसके बाद फ्रांस तथा अन्य अनेक देशों में इस प्रकार के अनेक बिजलीघर स्थापित किए गए। इनमें कुछ का विवरण दिया जा रहा है।

बिजली पैदा करने के लिए पहले ज्वार के प्रवाह को किसी खाड़ी अथवा बड़े जलाशय में भर लिया जाता है और खाड़ी के द्वार पर जहां वह सागर से मिलती है, एक अवरोधक लगा दिया जाता है। इससे ज्वार के पानी का आधिक्य ही उस पर से बहकर सागर में जा सकता है। साथ ही इससे ज्वार के पानी का स्तर सागर में पानी के स्तर से काफी ऊँचा हो जाता है। अब ज्वार के पानी को सागर में गिराकर अवरोधक के पास लगे टरबाइनों को चलाया जाता है। इस प्रकार ज्वार के पानी को स्थितिज ऊर्जा को विद्युत् ऊर्जा में बदल दिया जाता है। इस व्यवस्था में उस समय व्यवधान उत्पन्न हो जाता है जब शीर्ष (हैड) कम हो जाता है। शीर्ष, सागर में जल के सामान्य स्तर तथा संगृहीत जल के स्तर के अंतर को कहते हैं। ऐसे समय टरबाइन बंद हो जाता है।

बिजली बनाने के लिए ज्वार की स्थितिज ऊर्जा का ही नहीं गतिज ऊर्जा का भी उपयोग किया जा सकता है। ज्वार की गतिज ऊर्जा से प्राप्त विद्युत् आमतौर से ज्वार के ऊर्ध्वाधर शीर्ष के वर्ग की समानुपाती होती है तथा बृहत् ज्वार (सबसे ऊँचे ज्वार) से प्राप्त ऊर्जा का मान लघु (सबसे नीचे) ज्वार से प्राप्त ऊर्जा से सात गुना अधिक होता है।

ज्वार से प्राप्त ऊर्जा के मान को निरंतर एक समान बनाए रखने के लिए उत्पादन व्यवस्था में अनेक संशोधन किए गए हैं और अनेक प्रकार की तकनीकें सुझाई गई हैं। इन संशोधनों के परिणामस्वरूप अब ऐसे संयंत्र उपलब्ध हैं जिनसे केवल उतरते या केवल चढ़ते अथवा उतरते और चढ़ते, दोनों प्रकार के ज्वारों से बिजली बनाई जा सकती है। साथ ही एक संग्रहण-क्षेत्र वाले या दो संग्रहण-क्षेत्रों वाले अथवा पम्प भंडारण व्यवस्था वाले संयंत्र भी विकसित कर लिए गए हैं। इन संयंत्रों की दक्षता अलग-अलग होती है। दो संग्रहण-क्षेत्र वाले संयंत्रों की दक्षता सबसे अधिक 35 प्रतिशत होती है। आजकल ऐसे संयंत्र भी विकसित कर लिए गए हैं जिनमें तीन संग्रहण-क्षेत्रों का उपयोग किया जा रहा है।

ओटेक तकनीक की भांति ही ज्वार से बिजली प्राप्त करने में उत्पादन लागत बहुत कम आती है, प्रदूषण बिल्कुल भी नहीं होता और निरंतर बिजली प्राप्त की जा सकती है। पर ज्वार-भाटा काल और सौर दैनिक काल में थोड़ा-सा अंतर आ जाने पर पैदा होने वाली ऊर्जा का मान बदल जाता है। समुद्री तूफानों आदि से तथा समुद्री पानी और कीटों आदि के कारण होने वाले क्षरण से संयंत्र की रक्षा करने के लिए उपाय करने पड़ते हैं।

ज्वार से बिजली उत्पन्न करने के क्षेत्र में कनाडा, अर्जेंटाइना, संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, ब्रिटेन, रूस, जापान आदि देशों में काफी कार्य हुआ है। हमारे देश में कच्छ और भावनगर के तटों पर तथा खंभात की खाड़ी, डायमंड हार्बर (कलकत्ता के निकट) में आने वाले ज्वारों से बिजली तैयार की जा सकती है।

लहरों से बिजली

सागर की तरंगों या लहरों में भी काफी बड़ी मात्रा में ऊर्जा भंडारित होती है, पर अभी तक इस ऊर्जा को बड़े पैमाने पर बिजली में बदलने में सफलता नहीं मिली है। वैसे सागर के हर तट पर लहरों से बिजली नहीं बनाई जा सकती। इसके लिए ऐसा लंबा तट चाहिए जिसके आगे खुले सागर में तेज पवनें बहती हों परंतु कोई पर्वत आदि न हो। आमतौर पर ऐसे तट मध्य अक्षांशों में, महाद्वीपों के पश्चिमी किनारों पर स्थित हैं।

लहरों से बिजली बनाने के लिए अनेक देशों में प्रयोग किए गए हैं और उनमें कुछ सफलता भी मिली है। कदाचित सबसे अधिक सफलता मिली है - "दोलन करने वाली जलस्तंभ युक्ति" (ऑसिलेटिंग वाटर कालम डिवाइस) को। यह युक्ति 0.5 मेगावाट बिजली पैदा कर सकती है।

भारत में लहरों से बिजली की संभाव्य क्षमता 40,000 मेगावाट आंकी गई है, पर यह ऊर्जा बहुत बड़े क्षेत्र में 6000 किलोमीटर से भी बड़े क्षेत्र में वितरित है। वैसे हमारे देश में इस दिशा में काफी प्रयत्न किए गए हैं। ये प्रयत्न महासागर विकास विभाग, मद्रास और दिल्ली में स्थित इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, सेंटर फॉर अर्थ साइंसेज स्टडीज, तिरुवनंतपुरम, किर्लोस्कर इलेक्ट्रिक कंपनी आदि संस्थाओं ने किए हैं। इस संबंध में इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, मद्रास ने उल्लेखनीय कार्य किया है। वहां दोलन करने वाली जल स्तंभ युक्ति विकसित की गई है और दो ऐसे स्थानों का पता लगाया है जो लहरों से बिजली पैदा करने हेतु बहुत उपयुक्त हैं। इनमें से एक मद्रास के निकट है और दूसरा तिरुवनंतपुरम के पास, तिरुवनंतपुरम के निकट विझिजम नामक स्थान अधिक उपयुक्त पाया गया है। बिजली बनाने के लिए 150 किलोवाट क्षमता का एक संयंत्र 1991 से सफलता पूर्वक कार्य कर रहा है।

अन्य स्रोत

सागर की जलधाराओं से तथा उसके विभिन्न जलस्तरों की लवणता और

घनत्व में अंतर से भी बिजली बनाने के प्रयत्न किए गए हैं। वैसे जलधाराओं से बिजली पैदा करना अपेक्षाकृत कठिन कार्य है। संयुक्त राज्य अमेरिका के वैज्ञानिकों ने गल्फ स्ट्रीम से और जापान के वैज्ञानिकों ने क्यूरोसिवो जलधारा से बिजली पैदा करने के प्रयत्न किए हैं।

जब ब्राइन से ताजा पानी प्राप्त किया जाता है, तब ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यदि इस क्रम को उल्टा कर दिया जाए तो ऊर्जा मुक्त होनी चाहिए। विभिन्न लवणता वाले जलों से बिजली पैदा करने के लिए यही सिद्धांत अपनाया जाता है। इसके लिए विभिन्न भिन्न लवणताओं वाले जलों को आपस में मिलाया जाता है। जलों की लवणताओं में जितना अधिक अंतर होगा, प्राप्त होने वाली ऊर्जा की मात्रा भी उतनी ही अधिक होगी। इसलिए नदियों के बहुत कम लवणता वाले जलों को समुद्र के पानी से मिलाया जाता है। इस संबंध मे दो विधियां सुझाई गई हैं और इन्हें पेटेन्ट भी करा लिया गया है।

कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि विभिन्न जल स्तरों के तापांतर से बिजली बनाने की अपेक्षा इन जल-स्तरों के घनत्वों के अंतर से बिजली बनाना अधिक आसान होगा, पर इस दिशा में कोई प्रगति नहीं हुई है।

यद्यपि प्रथम दृष्टि से सागर में वनस्पतियां (ईंधन) उगाना और उससे बिजली पैदा करने की विधि काफी अव्यावहारिक प्रतीत होती है पर कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार यह विधि अन्य अनेक विधियों से बेहतर है। सागर की वनस्पतियों में सूक्ष्म शैवाल से बृहदाकार कल्प तक अनेक प्रजातियों के पौधे शामिल होते हैं। सागर के बायोमास को अनेक उपयोगी रसायनों, यथा - ओलोपिन, मेथेन तथा अन्य हाइड्रोकार्बन आदि में भी बदला जा सकता है। ओटेक तकनीक में गहरे सागर से लाए जाने वाले ठंडे पोषक पदार्थों से भरपूर पानी में बायोमास उगाना अधिक लाभदायक होगा।

सारणी : विश्व के प्रमुख ज्वार - बिजलीघर

ज्वार - बिजलीघर	देश	वार्षिक उत्पादन (करोड़ किलोवाट घंटों में)
रांस	फ्रांस	80
लोरिया	फ्रांस	24
चोसे	फ्रांस	1,500
आर्गना लांसिए	फ्रांस	85
ब्रैस्ट	फ्रांस	90
सोम	फ्रांस	100
पस्सामो कोडी	संयुक्त राज्य अमेरिका	60
फंडी की खाड़ी	कनाडा	160
सैवर्न	ग्रेट ब्रिटेन	237
सानजोस की खाड़ी	कनाडा	1000

8.4 परमाणु - ऊर्जा

वर्तमान समय में ऊर्जा संकट के समाधान हेतु परमाणु ऊर्जा एक सशक्त विकल्प है। यूरेनियम तथा थोरियम दो ऐसे तत्व हैं जिनके परमाणु-विखंडन से प्रचुर ऊर्जा निकलती है। सौभाग्य से ये दोनों तत्व विविध खनिजों के रूप में भारत के कई भागों में उपलब्ध हैं। दुनिया में थोरियम का सबसे बड़ा भंडार भारत में ही है (दक्षिण पश्चिम समुद्र तट क्षेत्रों में इसके भंडार बहुतायत से पाए जाते हैं)। भारत में परमाणु शक्ति का विकास सन् 1964 में आरंभ हुआ और 1972 में ट्राम्बे में पहली बार परमाणु-भट्ठी काम करने लगी। कल्पक्कम (तमिलनाडु) तथा नरोरा (उत्तर प्रदेश) में दो और परमाणु बिजली केंद्रों का निर्माण पूर्णतया घटकों तथा भारतीय इंजीनियरों द्वारा किया गया है।

भारत में नाभिकीय शक्ति कार्यक्रम कई चरणों में चलाया गया है। संयुक्त

राज्य अमेरिका की अंतर्राष्ट्रीय जनरल इलेक्ट्रिक कं. द्वारा तारापुर पावर स्टेशन को अपने आप चलने वाली (टन की) परियोजना के रूप में बनाया गया। इसक संस्थापित क्षमता 400 मेगावाट है। रिएक्टर में समृद्ध यूरेनियम तथा हल्का पानी मॉडरेटर तथा शीतक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। नाभिकीय शक्ति के प्रयोग में शंका के उपरांत भी यह उचित होगा कि यूरेनियम को, जिसका देश में सीमित भंडार लगभग 50 हजार टन है, पूर्णतया उपयोग में लाया जाए। प्रथम चरण में यह निश्चय किया गया कि भारी पानी पावर स्टेशन की स्थापना की जाए जिसके अनुसार प्लूटोनियम उपोत्पाद के रूप में मिलेगा। भारत में किसी भी भावी नाभिकीय शक्ति के कार्यक्रम को थोरियम पर निर्भर होना पड़ेगा क्योंकि भारत में थोरियम के संसार में सबसे बड़े भंडार हैं। थोरियम का सुरक्षित भंडार 76 लाख टन है। अतः दूसरे चरण में इस प्लूटोनियम को प्रयुक्त किए गए ईंधन से प्राप्त यूरेनियम के साथ तीव्र प्रजनक रिएक्टरों के संभरण हेतु प्रयुक्त किया जाएगा। इन तीव्र प्रजनक रियेक्टरों का विशेष गुण यह है कि जितना विखंडनीय पदार्थ उनमें डाला जाता है उससे अधिक विखंडनीय पदार्थ वे उत्पन्न करते हैं।

वर्तमान ऊष्मीय परमाणु बिजली केंद्र, उत्पादन के लिये केवल यूरेनियम-235 का उपयोग करते हैं। तेज प्रजनक परमाणु-भट्ठी को विकसित करके इस स्रोत का संवर्धन किया जा सकता है जो कि प्रचुर मात्रा में प्राप्त यूरेनियम-238 तथा थोरियम-232 का उपयोग करते हैं। इनका भंडार 300-500 वर्षों के लिए काफी होगा। ये रिएक्टर कम ईंधन खर्च करके अधिक ऊर्जा उत्पादित करते हैं किंतु ये रिएक्टर भी हर प्रकार से उतने ही खतरनाक हैं जितने कि ऊष्मीय परमाणु बिजली केंद्र होते हैं।

परमाणु-ऊर्जा से संबद्ध दो गंभीर समस्याएं हैं - अपशिष्टों का निपटान तथा दुर्घटना से सुरक्षा। परमाणु से ऊर्जा निकलने के बाद जो अपशिष्ट बचता है, वह रेडियोऐक्टिव होता है। इससे बीटा तथा गामा विकिरण निकलते हैं। यह अपशिष्ट अनेक वर्षों तक इसी प्रकार हानिकारक विकिरण उत्पन्न करता रहता है। ये विकिरण मानव के लिए अत्यंत हानिकारक हैं। अतः इनसे होने वाले प्रदूषण से बचने के लिए इन्हें सुरक्षित स्थान में गाड़ना जरूरी है। इन दोषों से बचने के लिए

वैज्ञानिकों ने परमाणु-ऊर्जा के विकल्प स्वरूप संलयन ऊर्जा की खोज कर ली है। जिस प्रकार परमाणु ऊर्जा परमाणु के विखंडन से प्राप्त की जाती है उसी प्रकार परमाणुओं के जोड़ने से-उनके संलयन से, संलयन ऊर्जा मिलती है। सूर्य की अनंत ऊर्जा इसी संलयन ऊर्जा का परिणाम है। सूर्य के भीतर हाइड्रोजन-परमाणुओं का संलयन होता है जिससे ऊर्जा उत्पन्न होती है।

पृथ्वी पर वैज्ञानिक ड्यूटीरियम, ट्राइटियम या ट्राइहीलियम के नाभिकों में नियंत्रित फ्यूजन अभिक्रियाओं द्वारा लाभदायक ऊर्जा प्राप्त करने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। यह संलयन दस करोड़ डिग्री सेल्सियस पर संभव है। इतना उच्च ताप तो हाइड्रोजन बम से ही संभव है। किंतु अब प्लाज्मा विधि से इतना ताप उत्पन्न किया जा सकता है। इस ऊर्जा में नाममात्र के बराबर प्रदूषण होगा। फ्यूजन अभिक्रियाओं में प्रयुक्त ईंधन ड्यूटीरियम असीमित मात्रा में समुद्री जल में उपलब्ध है, और समुद्री जल से ड्यूटीरियम प्राप्त करने की उत्पादन लागत कोयले की उत्पादन लागत से भी कम है। हालांकि नाभिकीय शक्ति कार्यक्रम एक तीव्र अनुसंधान तथा विकास कार्यक्रम है किंतु भारत ने इस क्षेत्र में पर्याप्त दक्षता प्राप्त कर ली है।

8.5 हाइड्रोजन - ऊर्जा

ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों में हाइड्रोजन एक अधिक ऊर्जा क्षमता वाला स्रोत है। इसका दहन ताप कम है। अतः इसका पूरा उपयोग हो सकता है। यदि जल में विद्युत् प्रवाहित की जाती है तो वह ऑक्सीजन तथा हाइड्रोजन गैसों में विच्छिन्न हो जाता है। सौर ऊर्जा द्वारा भी जल को विच्छिन्न करके हाइड्रोजन गैस प्राप्त की जा सकती है। इसके अतिरिक्त प्रकाश-संश्लेषण से, कुछ जीवाणुओं के प्रयोग द्वारा भी हाइड्रोजन प्राप्त की जा सकती है।

ऊर्जा संकट में ईंधन की समस्या का एकमात्र समाधान हो सकता है। ऐसे पदार्थ की खोज की जाए जो वर्तमान ईंधन तेल का विकल्प बन सके। यहां एक स्वाभाविक प्रश्न यह उठता है कि ऐसा कौन सा द्रव्य है जो ईंधन का कार्य कर सके? एक अच्छा ईंधन वही है जिसका पूरा उपयोग हो सके, ऊर्जा क्षमता अधिक हो,

वितरण सरल हो, सस्ता हो, संचित किया जा सके, पर्यावरण की दृष्टि से सुविधाजनक और निरापद हो और जिसका स्रोत बहुतायत में उपलब्ध हो।

हाइड्रोजन, एक नया विकल्प

इन गुणों को ध्यान में रखते हुए कई ईंधन प्रस्तावित किए गए हैं जिनमें संश्लेषित हाइड्रोकार्बन, मेथेन, मेथेनॉल, इथेनालऔर हाइड्रोजन प्रमुख हैं किंतु इन सब में हाइड्रोजन के ऊर्जा-विकल्प बनने की सबसे अधिक सम्भावनाएं हैं।

अन्य वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों की अपेक्षा हाइड्रोजन में द्रव्यमान ऊर्जा घनत्व बहुत अधिक है अर्थात् इसका दहन ताप कम है। इसलिए इसका पूरा उपयोग हो सकता है। साथ ही ऊर्जा क्षमता भी अधिक है। हल्की होने के कारण इसे वायुयान-ईंधन के रूप में वरीयता दी जाने लगी है। ब्रिटेन, अमेरिका, पश्चिमी जर्मनी और सऊदी अरब ने तो मिलकर इन देशों को जोड़ने वाली हवाई उड़ानों में द्रव हाइड्रोजन को चौड़े ढांचे वाले जेट विमानों में प्रयुक्त करना प्रारंभ कर दिया है।

हाइड्रोजन आसानी से इधर-उधर ले जाई जा सकती है और जहां-जहां प्राकृतिक गैस के लिए पाइप लगे हैं वहां उन्हीं पाइपों से हाइड्रोजन को वितरित किया जा सकता है। साथ ही 300 मील से अधिक की दूरी के लिए तो यह जल-ऊष्मीय ऊर्जा से भी सस्ती पड़ती है और अधिक सुविधाजनक भी है। जल ऊष्मीय या ऊष्मीय ऊर्जा को विद्युत् में परिवर्तित करके उपभोक्ताओं को वितरित किया जाता है जो रोशनी के साथ अन्य घरेलू कार्यों में प्रयोग में लाई जाती है, किंतु आर्थिक दृष्टि से यह एक महंगा साधन है।

हाइड्रोजन-ऊर्जा की आपूर्ति के लिए पाइपों को भूमि के अंदर लगाने से अधिक सुरक्षा रहती है और नगर की सुंदरता भी बनी रहती है जबकि विद्युत् वितरण के लिए बिछाए गए तारों का जाल नगर की सुंदरता में बाधा डालता है। सबसे बड़ी बात यह है कि इसके जलने के बाद केवल पानी बनता है, अतः पर्यावरण प्रदूषण का भी भय नहीं है।

हाइड्रोजन को विभिन्न भौतिक अवस्थाओं में रखा जा सकता है - जैसे साधारण दाब पर गैस, विद्युत् ऊष्मा अवरोधी पात्रों में द्रव और धात्विक हाइड्रोजन के रूप में ठोस अवस्था में रखा जा सकता है। ये हाइड्राइड जब और जहां आवश्यक हों सीधे हाइड्रोजन में परिवर्तित करके वितरित किए जा सकते हैं। यह संचय हाइड्रोजन के विभिन्न उपयोगों पर निर्भर करता है, जैसे - मोटर गाड़ियों के लिए धात्विक हाइड्रोजन सबसे अधिक सुविधाजनक है तो वायु-चालन के लिए द्रव-हाइड्रोजन को अच्छा माना जाता है। इस प्रकार वितरण और उपयोग की दृष्टि से हाइड्रोजन अन्य विकल्पों की अपेक्षा बहुत अधिक सुविधाजनक है।

हाइड्रोजन एक बहुत अच्छा ऊर्जा स्रोत हो सकता है क्योंकि यह पृथ्वी पर जल के रूप में अत्यंत मात्रा में उपलब्ध है। इस जल से असीमित मात्रा में हाइड्रोजन उत्पादित की जा सकती है। यह उर्वरक उद्योग में अमोनिया बनाने के लिए काफी मात्रा में उत्पादित की जा रही है। अन्य उद्योगों में भी हाइड्रोजन का उपयोग पर्याप्त मात्रा में होता है। यद्यपि अभी प्रयुक्त होने वाली कुल हाइड्रोजन का ४० प्रतिशत तो पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैसों द्वारा ही हो रहा है फिर भी इसके अतिरिक्त अन्य तकनीकें भी उपलब्ध हैं जो कोयला गैसीकरण और जल-विद्युत अपघटन पर आधारित हैं। हाइड्रोजन के जलने से पुनः पानी बन जाता है इसलिए इसके स्रोत के समाप्त होने की आशंका भी नहीं है। आजकल जल से हाइड्रोजन बनाने के लिए सौर ऊर्जा के प्रयोग पर भी कार्य हो रहा है।

ईंधन के रूप में इसके इकाई भार की दहन ऊर्जा किसी भी अन्य ईंधन की अपेक्षा बहुत अधिक है, जो एक शुभ लक्षण है। मोटर गाड़ियों में भी इसका प्रयोग बहुत सरल है क्योंकि गैसोलीन की अपेक्षा इसकी शक्ति की संभावना ढाई गुना है। वर्तमान आंतरिक दहन इंजनों से ईंधन के प्रवेश की विधियों में कुछ परिवर्तनों के बाद इसका उपयोग सफलतापूर्वक किया जा सकता है। अमेरिका में तो गैसोलीन चालित मोटरकारों के इंजनों में व्यावसायिक पैमाने पर परिवर्तन किए जा रहे हैं जो हाइड्रोजन को धात्विक हाइड्राइड के रूप में संचित रख सके। अब तो हाइड्रोजन द्वारा चलने वाली कई कारें प्रयोग में लाई जाने लगी हैं। पश्चिमी जर्मनी और जापान में भी इस पर अनुसंधान कार्य हो रहे हैं।

हाइड्रोजन तापीय (ऊष्मीय) ईंधन के रूप में प्रयुक्त की जा सकती है क्योंकि यह रंगहीन, गर्म और स्वच्छ ज्वाला के साथ जलती है। इसे प्राकृतिक गैस के स्थान पर उपयोग में लाया जा सकता है। इसके लिए औद्योगिक भट्ठी, रसोईघर और गर्म करने वाले अन्य उपकरणों के बर्नर में थोड़ा सा फेर-बदल करना पड़ेगा। उत्प्रेरण द्वारा इसका दहन ज्वालारहित होता है इसलिए इसमें बर्नर के स्थान पर चीनी मिट्टी की एक छिद्रित प्लेट इस्तेमाल की जाती है। इस प्लेट के ऊपरी सिरे पर प्लैटिनम की एक बारीक परत रहती है जो उत्प्रेरक का कार्य करती है। इस परत के संपर्क में आते ही हाइड्रोजन का त्वरित दहन हो जाता है और प्लेट गर्म हो जाती है। हाइड्रोजन एक अद्वितीय ईंधन है क्योंकि इसमें कोई तेज गंध वाली गैस या धुआं नहीं निकलता। इस कारण इसके लिए चिमनी की आवश्यकता नहीं पड़ती। इससे 40 प्रतिशत ईंधन की बचत हो जाती है जो कि ताप ह्रास के कारण व्यय होता है।

वायुयानों में हाइड्रोजन के दहन की स्थितियों में परिवर्तन करके इसके द्वारा अल्प मात्रा में बनने वाली नाइट्रिक ऑक्साइड के प्रभाव को भी दूर किया जा सकता है। इस विधि में अम्लीय उत्पाद नहीं बनते इसलिए वायुयानों के ईंधनों का जीवन भी बढ़ सकता है और रखरखाव का खर्च भी कम हो सकता है।

हाइड्रोजन को ऑक्सीकरण के साथ ईंधन सेल में भी संयुक्त किया जा सकता है, जो सीधे विद्युत उत्पन्न कर सके। इस सेल की संपरिवर्तन क्षमता लगभग 60 प्रतिशत होगी। यह विद्युत् उत्पादन और वितरण प्रणाली के लिए एक अच्छा उपयोग होगा। जब विद्युत् का उपयोग कम हो रहा हो तो इसे विद्युत् अपघटक द्वारा दूसरी दिशा में मोड़ा जा सकता है जो कि हाइड्रोजन उत्पन्न करके संचित रख सके और यह संचित हाइड्रोजन आवश्यकता पड़ने पर ईंधन सेलों में विद्युत् उत्पन्न करने के लिए जलाई जा सके। इस प्रकार विद्युत् उत्पादन के लिए हाइड्रोजन आर्थिक रूप से एक सहज और सस्ता साधन है।

हाइड्रोजन की ज्वलन सीमा अधिक है और यह आसानी से जलने के साथ-साथ विस्फोटक गुण भी रखती है। अतः रसोईघरों या अन्य घरेलू साधनों में इसके उपयोग पर सुरक्षा के लिए प्रश्न चिह्न लगाए जा सकते हैं। इस विषय में भी

काफी परीक्षण किए गए हैं और यह सिद्ध हो गया है कि यदि उचित सावधानियां बरती जाएं तो हाइड्रोजन को बिना किसी खतरे के इस्तेमाल किया जा सकता है क्योंकि गैसोलीन या प्राकृतिक गैस को भी सावधानियों के साथ ही साधारण जनता इस्तेमाल करती है। इसके कुछ गुण अन्य ईंधनों की अपेक्षा इसे अधिक निरापद बनाते हैं, जैसे-इसे विस्फोटित होने से बचाया जा सकता है। यह हल्की होने के कारण वायु में तेजी से वितरित हो सकती है जिससे इसके जल उठने की संभावना कम हो जाती है जबकि पेट्रोल वाष्प और प्रोपेन क्षैतिज रूप से फैल कर आग लगने के खतरे को बढ़ा देते हैं।

हाइड्रोजन को यदि भविष्य की ऊर्जा कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। इसकी बहुत अधिक संभावनाएं हैं और इन्हीं संभावनाओं को ध्यान में रखकर कुछ ने हाइड्रोजन के आर्थिक पहलू पर भी प्रकाश डाला है। निकट भविष्य में जल से हाइड्रोजन बनाने के लिए सरल तकनीकें खोजी जाएंगी और तब हाइड्रोजन सार्वभौम, सस्ती तथा प्रदूषणरहित ऊर्जा के रूप में प्रयुक्त होगी।

□

9

ऊर्जा-संरक्षण के महत्वपूर्ण पहलू

खेती करने से लेकर उद्योग स्थापित करने तक की दिशा में ज्यों-ज्यों प्रगति होती जा रही है, त्यों-त्यों ऊर्जा के उपभोग में बढ़ोत्तरी होती जा रही है। फलस्वरूप आज विश्व के अधिकांश विकसित और विकासशील देश ऊर्जा की कमी से प्रभावित हो रहे हैं। ऊर्जा के सीमित साधनों तथा इनकी निरंतर बढ़ती आवश्यकता को देखते हुए विश्व के समस्त देशों का ध्यान संभावित ऊर्जा संकट की ओर आकृष्ट हुआ है।

ऊर्जा-संरक्षण का अभिप्राय है ऊर्जा के उपलब्ध साधनों का मितव्ययिता से उपयोग करना। ऊर्जा-स्रोत सीमित हैं लेकिन हमारी आवश्यकताएं असीमित हैं। मानव की प्रत्येक प्रक्रिया ऊर्जा-व्यय पर आधारित है जिसका मूल्य अंतर्राष्ट्रीय या राष्ट्रीय बाजार में खनिज तेल या कोयले की निरंतर मांग के आधार पर बढ़ता है और बढ़ता ही जा रहा है।

ऊर्जा समस्या का समाधान ऊर्जा के नए-नए वैकल्पिक साधनों की खोज से तो होगा ही, फिर भी यदि हम उपलब्ध ऊर्जा का संरक्षण कर सकें तो यह "ऊर्जा बचत" हमारे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है। उपलब्ध साधनों का मितव्ययिता से उपयोग करना ही "ऊर्जा संरक्षण" है। ऊर्जा संरक्षण के अंतर्गत निम्नलिखित बातें सम्मिलित हैं --

1. ऊर्जा की मात्रा की ओर ध्यान दिए बिना कुछ योजनाओं को पूर्णरूपेण समाप्त कर ऊर्जा की बचत करना, जैसे-उत्पादन योजना रद्द करना, स्वचालित वाहन न खरीदना आदि।

2. पूर्व नियोजित योजनाओं को कार्यान्वित करते समय उनकी

गुणवत्ता में कमी करके ऊर्जा की बचत करना, जैसे-कार्यालय भवनों में तापस्थापी कम करना, धीमी गति से वाहन चलाना, कम शक्ति इंजन की कार खरीदना आदि।

3. पूर्ण नियोजित योजनाओं को उसी प्रकार या उससे बेहतर ढंग से कार्यान्वित करते हुए ऊर्जा उपयोग की कार्यक्षमता को बढ़ाकर उसकी खपत में कमी करके ऊर्जा की बचत करना, जैसे-अधिक कार्यक्षम स्वचालित इंजनों, आवासों में अतिरिक्त अवरोधक के माध्यम से तेल व गैस की खपत में कमी करना, औद्योगिक प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट ताप का प्रयोग करना आदि।

ऊर्जा-संरक्षण के लिए यह जानना आवश्यक है कि किस प्रकार विभिन्न यांत्रिक इकाइयों, मशीनों तथा उनकी क्रियाओं को चालू रखने के लिए कम से कम ऊर्जा से अधिक से अधिक कार्यक्षमता प्राप्त की जाए, जैसे-क्या भट्ठियों के जलाए जाने वाले कोयले के प्रत्येक कण से प्राप्त ऊर्जा का हम सही उपयोग कर पाते हैं या नहीं? आजकल अधिकांश उद्योगों में भाप की आवश्यकता रहती है। यदि इन्हीं उद्योगों में अधिक दाब वाली भाप से पहले विद्युत् जेनरेटर द्वारा विद्युत् उत्पादन कर लिया जाए, शेष कम दाब वाली भाप को उत्पादन-कार्य हेतु उपयोग में लाया जाए तो प्रत्येक औद्योगिक प्रतिष्ठान अपनी कुल विद्युत् खपत का 50 प्रतिशत से 80 प्रतिशत भाग स्वयं के स्तर पर ही पूरा कर सकता है।

स्वीडन के अधिकांश उद्योग प्रतिष्ठानों के उदाहरण हमारे सामने हैं। जहां प्रत्येक औद्योगिक इकाई अपशिष्ट ऊष्मा से अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। अमरीका में किए गए एक अध्ययन से पता चलता है कि उत्पादन क्षेत्र में प्रयुक्त की गई ऊर्जा का औसतन 25 प्रतिशत उन युक्तियों से बचाया जा सकता है जिनमें लगने वाली पूंजी व संबंधित लागत मूल्य उस लागत से कम होते हैं, जिसकी कि आवश्यकता उतनी ही मात्रा में ऊर्जा आपूर्ति उत्पादन में होती है। लागत मूल्यों को कम करने के अतिरिक्त ऊर्जा उपयोग की बढ़ी हुई कार्यक्षमता उत्तम पर्यावरण तथा ऊर्जा स्रोतों के संरक्षण का मार्ग प्रशस्त करती है।

ऊर्जा की खपत करने वाले वर्तमान उपस्करों का कार्य क्षमता-स्तर वर्तमान ऊर्जा-मूल्यों के अनुरूप नहीं है। यद्यपि इनका अनुरूपांतरण आर्थिक दृष्टि से आकर्षक है किंतु नए व अधिक कार्यक्षम उपस्करों से ही ऊर्जा की कार्यक्षमता में अत्यधिक बढ़ोत्तरी हो सकेगी। अतः जिस गति से वर्तमान उपस्करों को अधिक ऊर्जा कार्यक्षम मशीनरी से बदला जाएगा, उतना ही अधिक ऊर्जा की बचत की जा सकती है।

ऊर्जा संरक्षण की वस्तुस्थिति का अवलोकन करने पर पता चलता है कि उद्योगों में ऊर्जा बचत की ओर प्रबंधकों ने बहुत कम ध्यान दिया गया है जबकि व्यापारिक ऊर्जा के अधिकतम भाग का उपयोग औद्योगिक क्षेत्रों में किया जाता है। देश में सीमित ऊर्जा संसाधनों की उपलब्धि तथा भविष्य में संभावित ऊर्जा संकट को ध्यान में रखते हुए यह अति आवश्यक है कि सरकार और उद्योगपति इस विषय पर गंभीरता से विचार करें तथा ऐसी नीति निर्धारित करें जिससे देश में उपलब्ध ऊर्जा संसाधनों (परंपरागत एवं अपरंपरागत) का उचित उपयोग हो सके और उद्योगों में होने वाली ऊर्जा की हानि से बचा जा सके।

ऊर्जा संरक्षण की दृष्टि से निम्नलिखित उपायों को अपनाना तर्कसंगत होगा :

स्रोतों का सही उपयोगः

जहां तक संभव हो, उच्च कोटि के ईंधन तेल के स्थान पर अन्य प्रकार के उपलब्ध तेलों का उपयोग किया जाए।

कोयले द्वारा ऊर्जा उत्पादन में पीट कोयले का अधिकता से उपयोग हो। ऊर्जा के घरेलू साधनों का ज्यादा से ज्यादा उपयोग हो।

वैकल्पिक ऊर्जा साधनों, जैसे-सौर, पवन, ज्वारीय और भूतापीय ऊर्जा का उपयोग किया जाए।

गैस के संग्रहण और परिवहन का आदर्श तरीका निकाला जाए।

ऊर्जा का रूपांतरण

ऊर्जा के रूपांतरण के सही तरीके ऊर्जा संरक्षण में बहुत कुछ सहयोग देते हैं।

जैसे : (1) निम्न स्तर के कोयले के उपयोग की तकनीक के विकास द्वारा, (2) जल विद्युत संयंत्रों के सरलीकरण द्वारा, (3) कोयले के द्रवीकरण, वाष्पीकरण और उच्च स्तरीय रूपांतरण का ऊर्जा प्राप्ति में महत्वपूर्ण योगदान द्वारा।

तरीकों का सही चुनाव

ऊर्जा का स्थायी और सही उपयोग ऊर्जा के सही तरीकों के चुनाव पर निर्भर करता है, यथा : (1) शक्ति उत्पादन में परमाणु-शक्ति का अधिकाधिक उपयोग, (2) उद्योगों में कुल वाणिज्यिक ऊर्जा का केवल 30-35 प्रतिशत भाग उपयोग में आता है। अतः इन उद्योगों से प्राप्त ऊष्मा का अन्य स्थानों पर उपयोग (3) परिवहन में कोयले तथा तेल से उत्पन्न पर्यावरण प्रदूषण के खतरों को कोयले और तेल के वाष्पीकरण से मुक्त कराने की दिशा में प्रयास, (4) घरेलू ईंधन के रूप में बायोगैस का अधिकाधिक उपयोग।

कोयला, तेल, गैस, विद्युत, ऊर्जा के अलावा मानव और पशु शक्ति भी ऊर्जा के प्रमुख स्रोत हैं। अतः इनके संरक्षण और सदुपयोग के लिए भी उपाय सोचने की आवश्यकता है। सभ्यता के विकास में मानवीय श्रम के साथ पशुओं ने भी हाथ बंटाया है। चाहे हल जोतना हो या गाड़ी खींचना, आदि काल से इन कार्यों के लिए पशुओं का उपयोग होता रहा है। पशु-ऊर्जा को और अधिक उपयोगी बनाने के लिए उसकी क्षमता को बढ़ाने के प्रयास किए जाने चाहिए। इसके लिए काठ के पहिए और बैलगाड़ी के स्थान पर रबड़-टायरदार पहियों का उपयोग करके क्षमता में 2-3 गुनी वृद्धि की जा सकती है। पशुओं के कंधों पर रखने वाले जुए में सुधार करके उसे सुविधाजनक बनाया जा सकता है। पशुओं के साथ दुर्व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए।

बायोमास ऊर्जा के संरक्षण के लिए पेड़-पौधों को उगाने के साथ-साथ अन्य कृषि-जन्य अपशिष्टों को भी ऊर्जा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति में साझीदार बनाना आवश्यक है। जलीय बायोमास के रूप में प्राप्त होने वाली जलकुंभी तथा अन्य शैवालों को कृषि अपशिष्ट, पशुओं के गोबर, मानव-मल आदि के साथ मिलाकर बायोगैस संयंत्रों के लिए कच्चा माल तैयार किया जा सकता है। जलकुंभी से प्राप्त गैस में 69 प्रतिशत तक मेथेन गैस रहती है। वाहित मल-जल में कैडमियम व निकेल तत्वों की अधिक मात्रा होती है। ऐसे जल में उगने वाली जलकुंभी से 91 प्रतिशत तक मेथेन प्राप्त की जा सकती है।

राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान, नागपुर में ताजा पौधे की कुट्टी, सूखे चूर्ण, लुग्दी और विभिन्न अनुपातों में गोबर के साथ मिलाकर किए गए प्रयोगों में एक किलोग्राम ताजा जलकुंभी के घोल से 11.1 से 17.9 लीटर गैस प्राप्त की गई, जिसमें 57.2 से 61.5 प्रतिशत मेथेन थी। यह भी देखा गया कि ताजी जलकुंभी से सूखे चूर्ण की अपेक्षा अधिक गैस मिलती है।

तेल की बढ़ती कीमतों, विदेशी मुद्रा, ट्रांसफार्मरों की चोरी आदि विविध समस्याओं को ध्यान में रखते हुए बायोगैस तकनीक का उपयोग हमारे देश के लिए लाभप्रद हो सकता है। एक अनुमान के अनुसार भारत के गांवों में उपलब्ध गोबर को जैव गैस संयंत्रों के माध्यम से उपयोग करने पर प्राप्त ऊर्जा तथा खाद इस प्रकार होगी : सन् 1961 में पशु संख्या के आंकड़ों के आधार पर पशु संख्या-226 बिलियन थी जिससे ताजा गोबर प्राप्ति 1.20 बिलियन टन प्रतिवर्ष या 250 मिलियन टन सूखा गोबर प्रतिवर्ष और संभावित प्राप्त ऊर्जा 195 मिलियन मेगावाट घंटा हुई। साथ ही 236 मिलियन टन बढ़िया खाद या 24 बिलियन लीटर मिट्टी के तेल के बराबर ऊर्जा भी उपलब्ध हो सकती है। यदि इस प्रकार उपलब्ध होने वाली खाद की रासायनिक खाद से तुलना करें तो यह 3.5 मिलियन टन नाइट्रोजन खाद के बराबर होगी।

विशेषज्ञों के अनुसार संप्रति हमारे देश में पशुधन की उपलब्धि 1961 के मुकाबले कम से कम 50 प्रतिशत अधिक है। अतः उपर्युक्त आंकड़ों को ड्योढ़ा किया जा सकता है।

"ऊर्जा-ग्राम परियोजना" ऊर्जा संरक्षण के परिप्रेक्ष्य में काफी उपयोगी सिद्ध हुई है। ऊर्जा ग्राम वह ग्राम कहलाता है जिसमें लोगों की अधिकांश ऊर्जा संबंधी आवश्यकता को स्थानीय उपलब्ध नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का अधिकाधिक उपयोग करके पूरा करने का प्रयास किया जाता है। इस परियोजना के अंतर्गत गांवों की अधिकांश ऊर्जा संबंधी मांगों को पूरा करने के लिए विभिन्न ऊर्जा उत्पादक उपकरणों और प्रणालियों के मिश्रित रूप पर विचार किया जाता है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य विभिन्न उपकरणों तथा प्रणालियों के तकनीकी कार्य निष्पादन, एकीकरण, पहलुओं, सामाजिक-आर्थिक, सक्षमता और समग्र विकास प्रक्रिया पर इन सबके प्रभाव का मूल्यांकन करना है। इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा संरक्षण और उसके अतिदक्ष उपयोग की काफी संभावनाएं हैं।

वस्तुतः ऊर्जा विकास एक सतत् गतिविधि है जिसकी ग्रामीण स्तर पर सभी विकास योजनाओं से पारस्परिक संबद्धता है। आने वाले समय में ऊर्जा की सभी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सस्ता विकल्प है।

ऊर्जा ग्राम परियोजना - विभिन्न चरण

ग्राम चयन

ग्राम सर्वेक्षण

ऊर्जा की मांग तथा संसाधनों की उपलब्धता का समावलोकन

संकल्पनात्मक नवीकरणीय ऊर्जा केंद्र निर्माण तथा उपयुक्त उपकरणों/प्रणालियों का चयन

योजना का क्रियान्वयन

युक्तियों व प्रणालियों का नियंत्रित प्रचालन तथा अनुरक्षण

पुनः निरीक्षण व सुधार

अधिकाधिक आर्थिक गतिविधियों का ऊर्जा-ग्राम परियोजना से एकीकरण

सामाजिक प्रभाव का अध्ययन

राज्य/ग्राम/सरकारी/सहकारी समिति का गठन व इसका औपचारिक हस्तांतरण

वर्ष 1973 में प्रथम तेल-संकट से कई विकासशील देशों में ऊर्जा में तीव्रता तेजी से घटी है जो ऊर्जा संरक्षण के प्रभावी उपायों द्वारा संभव हुआ। अधिकांश विकासशील देशों में ऊर्जा में तीव्रता अधिक है। दक्षिणी कोरिया में 0.39, अमेरिका में 0.33 और जापान में 1.12 के मुकाबले भारत में ऊर्जा खपत, कि.ग्रा. तेल समतुल्य प्रति डालर कुल घरेलू उत्पाद सर्वाधिक 0.91 है। अतः भारत में ऊर्जा संरक्षण की भारी संभावनाएं हैं तथा इसके लिए वर्तमान प्रयासों को मजबूत करने और नए उपाय अपनाने की जरूरत है।

अध्ययनों के अनुसार औद्योगिक रूप से उन्नत देशों के मुकाबले भारत में ऊर्जा उपयोग की दक्षता और साथ ही तेल उपयोग की दक्षता बहुत कम है। अतः ऊर्जा संरक्षण की संभावनाएं विभिन्न क्षेत्रों में 20 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक हैं। सीमित ऊर्जा संसाधनों तथा उपयोग की निम्न दक्षता देखते हुए संरक्षण की निम्नलिखित चुनौतियों का सामना करना है :

1. ऊर्जा का दक्ष प्रयोग तथा संरक्षण करना,
2. तेल पर निर्भरता को घटाना तथा तेल की जगह गैस का प्रयोग बढ़ाना,
3. व्यापारिक ऊर्जा की मांग का प्रबंधन सख्ती से करना,
4. पर्यावरण संरक्षण सुनिश्चित करना, तथा
5. वैकल्पिक तथा गैर परंपरागत ऊर्जा संसाधनों का विकास करना।

उपरोक्त सभी कार्य परस्पर एक दूसरे से जुड़े हुए हैं जिनके लिए सतत तथा सामूहिक रूप से प्रयास करने होंगे ताकि वांछित लक्ष्य प्राप्त हो सके।

तेल संरक्षण के प्रयास

भारत में ऊर्जा संरक्षण और खासकर तेल संरक्षण का कार्य 1976 में पेट्रोलियम कंजर्वेशन ऐक्शनग्रुप की स्थापना से आरंभ हुआ, जो 1978 में केंद्रीय पेट्रोलियम मंत्रालय के अंतर्गत एक पंजीकृत संगठन 'पेट्रोलियम कंजर्वेशन एसोसिएशन'

(पी.सी.आर.ए.) के रूप में स्थापित हुआ। पी.सी.आर.ए. को निम्नलिखित दायित्व सौंपे गए :

1. तेल संरक्षण के महत्व, उपायों और फायदों, के बारे में लोगों में जागरूकता पैदा करना,
2. विभिन्न क्षेत्रों में पेट्रोलियम संरक्षण हेतु अनुसंधान तथा विकास कार्यों को बढ़ावा देना,
3. ईंधन-दक्ष प्रौद्योगिकी के विकास और प्रयोग को बढ़ावा देना,
4. प्रशिक्षण तथा तकनीकी की परामर्शी सेवाएं प्रदान करना, तथा
5. तेल की जगह अन्य ईंधनों का प्रयोग बढ़ाना।

तेल संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए पी.सी.आर.ए. द्वारा निम्नलिखित योजनाएं और कार्यक्रम सफलतापूर्वक चलाए गए हैं :

(क) उद्योगों में तेल संरक्षण

1. तेल के उपयोग पर अध्ययन करना,
2. ऊर्जा ऑडिट हेतु छूट (लागत का 50 प्रतिशत या अधिकतम 50,000 रु.) देना
3. बॉयलर के आधुनिकीकरण हेतु सरल शर्तों पर उधार देना

   (कोयला या तेल आधारित दक्ष बॉयलर के लिए 8 प्रतिशत)
4. निम्न-अधिक हवा पर जलने वाले दक्ष बर्नरों का विकास और व्यापारीकरण, तथा
5. तेल संरक्षण पर कार्यक्रम चलाने के लिए सरकारी विभागों, तेल कंपनियों, उद्योगों आदि के सहयोग से राज्य स्तरों पर कार्य-दल स्थापित करना।

(ख) परिवहन में तेल संरक्षण

1. अदक्ष इंजनों की जगह दक्ष इंजन लगाने के लिए राज्य सरकार परिवहन इकाइयों को सरल शर्तों पर ऋण देना,

2. प्रचालन तथा रख-रखाव को सुचारू बनाने के लिए मॉडल वाहन डिपो और गैरेज बनाना तथा उनके फायदों को प्रदर्शित करना,

3. किफायती ईंधन उपयोग हेतु आवश्यक "ऐडिटिव" या योगज पदार्थों का मूल्यांकन करना, तथा

4. संरक्षण कार्य हेतु सरकारी विभागों, तेल कंपनियों, वाहन समूहों के प्रचालकों, राज्य परिवहन इकाइयों आदि के सहयोग से राज्य स्तरों पर कार्य-दल स्थापित करना।

(ग) कृषि क्षेत्र में तेल संरक्षण

1. सिंचाई के डीज़ल-पंपों में सुधार हेतु छूट देना और 30% तक ईंधन बचाना, तथा

2. डीज़ल पंपसेट में अदक्ष "फुटबाल" को बदलने के लिए छूट देना

(घ) घरेलू क्षेत्र में तेल संरक्षण

खाना पकाने वाले दक्ष किरोसिन/एल.पी.जी. स्टोव विकसित करना तथा 20 से 25 फीसदी ईंधन की बचत करना।

उपलब्धियां :

उपरोक्त चार क्षेत्रों में तेल संरक्षण कार्यक्रमों में पी.सी.आर.ए. को आशातीत सफलताएं मिली हैं और भावी संभावाएं पैदा हुई हैं। अदक्ष बॉयलरों की जगह 360 दक्ष बॉयलर लगाए गए हैं। विभिन्न औद्योगिक इकाइयों में 4000 से ज्यादा सुधरे दक्ष बर्नर लगाए गए हैं जिनमें 10-15 फीसदी तेल की बचत होती है। परिवहन क्षेत्र में संरक्षण प्रयासों से गत 10 वर्षों में औसत कि.मी. प्रति लीटर के

रूप में 4.01 से 4.41 की प्रगति हुई है। 5200 सिंचाई पंपों को सुधार कर दक्ष बनया गया है जिससे 30 प्रतिशत तेल के बचत की संभावना है। करीब 80 लाख दक्ष किरोसिन बत्तीदार स्टोव तथा 5 लाख दक्ष एल.पी.जी. स्टोव घरों में इस्तेमाल हेतु पहुंच गए हैं। उपरोक्त संरक्षण कार्य प्रगति की दिशा में अग्रसर हैं। विविध स्तरों पर औद्योगिक कर्मियों को प्रशिक्षण देना पी.सी.आर.ए. का तेल संरक्षण हेतु योगदान है।

अनुसंधान तथा विकास

प्रौद्योगिकी के विकास और उसके व्यापारीकरण की आर्थिक प्रगति में नियमित भूमिका है, अतः विभिन्न अनुसंधान एवं विकास संगठनों, सी.एस.आई.आर. प्रयोगशालाओं, तकनीकी संस्थाओं आदि के सहयोग से पी.सी.आर.ए. द्वारा अनुसंधान तथा विकास के प्रयासों को निम्नलिखित क्षेत्रों में बढ़ावा देता है :

1. ईंधन-दक्ष विधियों और उपकरणों का विकास करना,
2. पेट्रोलियम उत्पादों की जगह वैकल्पिक संसाधनों का प्रयोग बढ़ाना, तथा
3. ईंधन बचत हेतु योगज पदार्थों, उपायों तथा उपकरणों का मूल्यांकन करना।

देश में ऊर्जा संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए निम्नलिखित क्षेत्रों में पहल करने की जरूरत महसूस की गई है :

क. उद्योगों में तेल खपत के उपयुक्त और विशिष्ट मानक विकसित करना,

ख. मानव संसाधन प्रबंधन हेतु ऊर्जा प्रबंधकों को प्रशिक्षण तथा पुनः प्रशिक्षण दिलाना,

ग. तेल की जगह कोयला और अन्य उत्पादों का प्रयोग बढ़ाना,

घ. देश के विभिन्न क्षेत्रों में दक्षता मानक के मूल्यांकन व सुधार हेतु आंकड़ा-आधार (डाटाबेस) विकसित करना और अंतर्राष्ट्रीय मानकों से इनकी तुलना करना, तथा

च. ईंधन-दक्ष प्रणालियों, संयंत्रों, उपकरणों आदि के प्रयोग को प्रोत्साहित करना।

देश में ईंधन संरक्षण हेतु कुल तकनीकी विशेषता विकसित करना भी उपरोक्त पहलू के संबद्ध एक अन्य क्षेत्र है। ऊर्जा संरक्षण पर शिक्षा और प्रशिक्षण का संकल्पनात्मक प्रतिरूप सोचा गया है।

जागरूकता अभियान

ऊर्जा संरक्षण पर जागरूकता अभियान चलाया गया है जिसके अंतर्गत संगोष्ठियों, विशिष्ट अध्ययनों, प्रकाशनों, पुरस्कारों आदि के द्वारा इस कार्य को प्रयोजनपरक तथा प्रोन्नत किया जाएगा।

प्रक्रिया सामग्री का विकास

ऊर्जा डाटाबेस के विकास हेतु अभिकलित्र (कंप्यूटर) की प्रक्रिया सामग्री (सॉफ्टवेयर) निम्नलिखित प्रयोजनों हेतु विकसित की जा रही है :

1. तेल संरक्षण के विशिष्ट मानकों का विकास, लक्ष्य निर्धारण तथा बेंच मार्किंग,

2. प्रशिक्षण निर्देशों का विकास, और

3. अभियंताओं तथा प्रशिक्षण-प्रबंधकों के निमित्त प्रशिक्षण के विषय-क्षेत्र।

नीति नियोजकों के लिए कार्यक्रम

ऊर्जा प्रबंधन नीतियों के लिए अनुसंधान तथा विकास की कार्यप्रणाली बनाना, ऊर्जा संरक्षण के उपायों का अनुवीक्षण करना, ऊर्जा के प्रयोग की

अर्थव्यवस्था सुनिश्चित करना, मांग का प्रबंधन करना, प्रौद्योगिकी का प्रबंधन और अद्यतन तथा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग पैदा करना आदि नीति नियोजकों के कार्यक्रम हैं।

औद्योगिक कार्मिकों के लिए कार्यक्रम

ऊर्जा प्रबंधकों, संयंत्र-अभियंताओं तथा प्रचालकों के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन उपरोक्त कार्यक्रम के अंतर्गत है।

विद्यालयों/अभियांत्रिकी संस्थाओं में पाठ्यक्रम

बच्चों के सामान्य विकास के अंतर्गत ऊर्जा संरक्षण का विचार विद्यालय स्तर पर ही पैदा करना वांछनीय है। इस उद्देश्य हेतु मानव संसाधन विकास मंत्रालय तथा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् की मदद से ऊर्जा के संसाधनों और उनके प्रयोग संबंधी संगठित विषयों को पाठ्यक्रम में शामिल किया जा रहा है।

ऊर्जा संरक्षण : एक संस्कृति, एक स्वभाव

तेल पर भारी दबाव और संसाधनों की कमी से निपटने के लिए देश में ऊर्जा संरक्षण तथा ऊर्जा खपत दक्षता में वृद्धि हेतु सतत सुनिश्चित प्रयासों की जरूरत है। ऊर्जा खपत दक्षता में वृद्धि तथा ऊर्जा खपत में कमी करना एक समन्वित कार्यक्रम के अंतर्गत अपेक्षित है। ऊर्जा और खासकर तेल पर दबाव घटाने के लिए नई नीतियों और संस्थागत ढांचों की जरूरत है। नीतियों और उनके कार्यान्वयन के अतिरिक्त ऊर्जा संरक्षण कार्य को अपनी संस्कृति व स्वभाव के रूप में अपनाना होगा।

भारत में ऊर्जा की मांग और आपूर्ति में विद्यमान भारी असंतुलन से निपटने के लिए कई प्रकार की युक्तियां और प्रौद्योगिकी तैयार की जा रही है। इनमें से तथाकथित "सह-उत्पादन" अपेक्षाकृत एक नया किंतु आकर्षक विकल्प है। सह-उत्पादन एक प्रौद्योगिकी के रूप में विकसित हुआ है जिसके जरिए ऊर्जा संरक्षण के साथ व्यर्थ पदार्थों की उत्पत्ति पर नियंत्रण और पर्यावरण संरक्षण निहित है। इस प्रौद्योगिकी को विकसित करना, इसके प्रयोग को बढ़ावा देना और उद्यमियों में इसके प्रति रूझान पैदा करना राष्ट्रीय महत्व के कार्य हैं।

"सह-उत्पादन" क्या है ?

एक ही ईंधन स्रोत से दो उपयोगी रूपों वाली ऊर्जा का दक्षतापूर्वक उत्पादन करना "सह-उत्पादन" कहा जाता है, जिसमें किसी एक उत्पादन प्रणाली से निष्कासित अवशेष-ऊर्जा को दूसरी प्रणाली के संचालन हेतु संबद्ध किया जाता है। सामान्यतः प्राथमिक ऊर्जा ऊष्मा (भाप) के रूप में होती है तथा द्वितीय रूप विद्युत् अथवा यांत्रिक ऊर्जा के रूप में। इस प्रकार से एक ही औद्योगिक इकाई के अंदर भाप और विद्युत् दोनों का उत्पादन किया जा सकता है। कई ऊर्जा साध्य उद्योगों में, जैसे - कपड़ा मिलों, चीनी मिलों, कागज, रासायनिक खादों, खाद्य-संसाधन संबंधी रसायनों और पेट्रोरसायनों आदि में भाप का आंतरिक रूप में उत्पादन होता है, किंतु विद्युत् बाहर से प्राप्त की जाती है। सह-उत्पादन के जरिए भाप के साथ विद्युत् का उत्पादन करने से न सिर्फ आंतरिक रूप से विद्युत् की आपूर्ति हो सकती है बल्कि बची हुई विद्युत् ग्रिड को बेची जा सकती है। इस प्रकार से विद्युत् के उत्पादन हेतु जलाया जाने वाला अतिरिक्त ईंधन बच जाता है और प्रदूषण घटाने में भी मदद मिलती है।

ईंधन को विद्युत् में परिवर्तित करने की दक्षता 30 से 35 फीसदी के मुकाबले सह-उत्पादन के जरिए प्राप्त प्रणाली की कुल दक्षता 10 फीसदी तक हासिल की जा सकती है। सह-उत्पादन द्वारा 10 से 30 फीसदी तक ईंधन खपत घटाई जा सकती है। इसके अलावा ऊर्जा के दो रूपों का सह-जनन आरंभिक लागत तथा उत्पादन लागत कम करने में भी सहायक होता है।

सह-उत्पादन के लाभ

सह-उत्पादन में जिस प्रकार ऊर्जा-चक्र-दक्षता में सुधार होता है उससे निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं :

1. एक ही ईंधन से ऊष्मा तथा विद्युत् दोनों को प्राप्त करने में कुल दक्षता बढ़ती है जिसके कारण ईंधन की खपत और खर्च कम होता है, कम लागत पर उत्पाद प्राप्त होते हैं और पूंजी निवेश ज्यादा आकर्षक होता है।

2. प्राप्त ईंधन से उपयोगी ऊर्जा का उत्पादन अपशिष्ट ऊर्जा के मुकाबले पर बढ़ जाता है, जो अन्यथा पर्यावरण में प्रवेश करके असंतुलन पैदा करती है।

3. ऊर्जा-संरक्षण कई रूपों में एक साथ होता है, जैसे-बाहर से ग्रिड द्वारा प्राप्त विद्युत् की खपत अधिकाधिक कम करना, प्राप्त ऊर्जा का उद्योगों की विविध क्रियाओं में प्रयोग करना तथा निम्न दक्षता के स्रोतों से प्राप्त ऊर्जा पर रोक लगाना और शीतलन तथा निष्कासन प्रणालियों से व्यर्थ होने वाली ऊर्जा को उपयोग में लाना।

4. सह-उत्पादन वस्तुतः विद्युत् और भाप के उत्पादन का विश्वसनीय विकल्प है और उन स्थितियों में विशेष रूप से वरदान है जहां विद्युत् आपूर्ति की बड़ी अविश्वसनीय स्थिति है।

5. विद्युत् प्रेषण तथा वितरण से होने वाला 8 से 10 फीसदी क्षय उपयोग के स्थान पर ही विद्युत् जनन द्वारा रोका जा सकता है, जैसा कि सह-उत्पादन में संभव है।

6. पारंपरिक विद्युत् संयंत्रों को बैठाने में लगने वाले समय यानी 5 से 6 वर्ष के मुकाबले सह-उत्पादन के संयंत्र 2 से 5 वर्ष में ही बैठाए जा सकते हैं।

7. कम मात्रा में अधिक दक्षता पर ईंधन के प्रयोग से पर्यावरण पर कम भार पड़ता है और खासकर अनिष्टकर प्रदूषकों, जैसे-सल्फर डाईऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड, कणिकाओं आदि के निष्कासन में कमी आती है।

सह-उत्पादन के प्रकार और प्रौद्योगिकी

औद्योगिक इकाई में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न भागों, जैसे-ऊर्जा परिवर्तन

प्रणाली, संयंत्र प्रणाली ऊष्मा स्रोत, ऊष्मा पंप आदि को एक संपूर्ण प्रणाली में एकीकृत करने से सह उत्पादन की प्रणाली बनती है, जिसके द्वारा उस इकाई की विद्युत् तथा ऊष्मा की जरूरतों की आपूर्ति होती है। यह मुख्यतः दो प्रकार की प्रणाली है। प्रथम प्रणाली यानी अपरिचक्र में प्राथमिक ईंधन का प्रयोग विद्युत्-उत्पादन हेतु किया जाता है और अवशेष निष्कासन ऊष्मा द्वारा प्रक्रियाओं के लिए आवश्यक ऊर्जा यानी गर्मी प्रदान की जाती है। दूसरे अधस्तल चक्र में प्राथमिक ईंधन से उच्च तापमान की ऊष्मा तैयार की जाती है तथा गर्म निष्कासित भाप से विशिष्ट अवशेष-ऊष्मा-बॉयलरों और टरबाइनों द्वारा विद्युत् पैदा की जाती है। वस्तुतः सह-उत्पादन की किसी प्रणाली में आवश्यक संयंत्र औद्योगिक इकाई की विशिष्टताओं या जरूरतों पर निर्भर करते हैं।

प्रथम प्रणाली में असंघनन टरबाइनों द्वारा सह-उत्पाद के रूप में विद्युत् पैदा की जाती है जिसकी मात्रा प्रक्रियाओं में आवश्यक भाप की मात्रा पर निर्भर करती है। अतः कुल विद्युत् आपूर्ति हेतु कुछ विद्युत् ग्रिड से लेनी होगी या अलग से तैयार करनी होगी। सह-उत्पादित विद्युत् ऊष्मा-इंजन से प्राप्त हो सकती है जो आवश्यक पंप या संपीडनी का सीधा संचालन कर सकते हैं।

दूसरी प्रणाली में गैस टरबाइनों से निष्कासित गैस, प्रक्रिया हीटरों से निकली गैस और प्रक्रिया-वाष्प की अपशिष्ट ऊष्मा का प्रयोग किया जाता है। प्रणाली के संचालन हेतु प्रयुक्त ईंधन निम्नलिखित हैं :

1. वन-आधारित कागज, प्लाईवुड, आरा-मशीनों से प्राप्त लकड़ी का पूरा, छाल व अन्य काष्ठ अवशेष,
2. पेट्रोलियम तथा रसायन उद्योगों से प्राप्त बचे हुए हाइड्रोकार्बन पदार्थ और अन्य छोड़ी गई गैसें,
3. इस्पात उद्योग से प्राप्त कोक ओवन गैस, ब्लास्ट फरनेस गैस और संयंत्र की अन्य छोड़ी गई गैसें,

4. खाद्य संसाधन में उत्पन्न रेशेदार, अपशिष्ट, जैसे-चीनी मिलों की व्यर्थ खोई आदि, तथा

5. अपशिष्ट उपचार संयंत्रों से प्राप्त व्यर्थ ईंधन स्रोत।

विद्युत् उत्पादन में वृद्धि हेतु सह-उत्पादन में उच्च दाब और उच्च तापमान प्रणालियों का प्रयोग होता है। भारत में 'भेल', थरमैक्स, वालचंदनगर उद्योग, टेक्समाको, लिपि, ए.सी.सी., बैबकॉक, आइ.एस.जी.ई.सी, त्रिवेणी इंजीनियरिंग, किर्लोसकर, एल. एंड टी., जान थाम्पसन, कावेरी इंजीनियरिंग आदि कंपनियों द्वारा विभिन्न आकार-प्रकार के बॉयलरों, टरबाइनों, डीज़ल इंजनों आदि का निर्माण किया जाता है। किंतु देश में निर्मित उच्च दाब के बॉयलर, टरबाइन और सहायक यंत्र पर्याप्त संख्या में उपलब्ध नहीं हैं, खासकर उपयुक्त प्रकार की टरबाइनों का आयात करना पड़ता है। सह-उत्पादन हेतु उपयुक्त प्रौद्योगिकी पर अभी काफी विकासात्मक कार्य करने बाकी हैं।

भारत में सह-उत्पादन की संभावनाएं

देश में सह-उत्पादन की कुल संभावनाओं पर कोई संपूर्ण अध्ययन-सर्वेक्षण तो नहीं हो पाया है किंतु कुछ सीमित अध्ययनों के अनुसार कुछ अनुमान प्रस्तुत किए गए हैं। राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद् के स्थूल अनुमानों के अनुसार 150 से 28 जांचे गए उद्योगों में सह-उत्पादन की संभावना 421 मेगावाट के समतुल्य है जिसमें 1500 मेगावाट अतिरिक्त विद्युत् का जनन हो सकता है। इन उद्योगों में कागज तथा लुगदी, तेलशोध कारखाने, रेयॉन, रसायन तथा रासायनिक उर्वरक कारखाने शामिल हैं। भारतीय उद्योग परिसंघ द्वारा महाराष्ट्र में सह-उत्पादन की संभावना पर अध्ययन किया गया और प्रथम और द्वितीय प्रणाली की संभावनाएं क्रमशः 2150 तथा 50 मेगावाट के समतुल्य पाई गईं। संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय विकास अध्ययन एजेन्सी के अनुसार महाराष्ट्र और गुजरात में सह-उत्पादन की संभावना 2556 मेगावाट पाई गई है। टाटा एनर्जी रिसर्च इंस्टीट्यूट द्वारा देश की 300 औद्योगिक इकाइयों का विस्तृत अध्ययन करने पर सह-उत्पादन की संभावना 7953 मेगावाट पाई गई, जिसमें लगभग 65 फीसदी हिस्सा चीनी उद्योग का है। कृत्रिम रेशा, सूती रेशा और इस्पात उद्योगों का हिस्सा दूसरे नंबर पर है।

बायोमास (जैवमात्रा) पर आधारित सह-उत्पादन

भारत के कृषि प्रधान देश होने से यहां जैवमात्रा द्वारा ऊर्जा प्राप्ति की सर्वाधिक संभावनाएं हैं। कृषि तथा कृषि-उद्योगों, वनों और पशुपालन उद्योग से इतनी जैवमात्रा मिलती है जो गांवों में विद्युत् के विकेंद्रीकरण में निर्णायक योगदान कर सकती है। प्रकाश-संश्लेषण क्रिया द्वारा जैवमात्रा में पैदा की गई ऊर्जा हमारी कुल खपत का 17 गुना है। जैवमात्रा का गैसीकरण एक आकर्षक विकल्प के रूप में उभरा है और देश में इस पर कई बड़ी परियोजनाएं चल रही हैं। ऊर्जा संरक्षण में जैवमात्रा के प्रयोग की विशाल संभावनाएं हैं क्योंकि ज्यादातर जैवमात्रा मुद्राकृत नहीं हैं और ग्रामीण क्षेत्रों में मुफ्त उपलब्ध हैं। जैवमात्रा पर आधारित सह-उत्पादन हेतु बहु-ईंधन बॉयलरों की जरूरत है क्योंकि खोई-जैसी जैवमात्रा तथा अन्य कृषि अवशेष साल के बारह महीने समान रूप से नहीं मिलते हैं। फिलहाल भारत में ऐसे 50 से 100 मेगावाट संयंत्रों के लिए ऐसे बहु-ईंधन बॉयलर प्राप्त नहीं हैं जो 100 वायुमंडल-दबाव के ऊपर तक काम करें। जैवमात्रा सुखाने वाले सक्षम उपकरणों की भी अभी एक समस्या है। तीन या चार कंपनियों को छोड़कर सह-उत्पादन हेतु पूर्ण संयंत्र प्रदान करने वाले निर्माताओं का अभाव है।

यह एक महत्वपूर्ण बात है कि भारत सरकार के अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत विभाग द्वारा गन्ने की खोई पर आधारित सह-उत्पादन हेतु वित्तीय प्रोत्साहन प्रदान किया जा रहा है ताकि परियोजनाएं तैयार की जाएं और संबंधित प्रौद्योगिकी का प्रदर्शन किया जाए। इन संयंत्रों से उत्पन्न अतिरिक्त विद्युत् को राज्य विद्युत् मंडलों को बेचने के संबंध में कदम उठाए जा रहे हैं।

इस समय देश में सह-उत्पादन कार्यान्वित करने के रास्ते में प्रौद्योगिकी तथा संयंत्र, वित्त, नियम-कानून, प्रशिक्षित जनबल, मूल्य-निर्धारण तथा ग्रिड संबंधी कई कठिनाइयां हैं। इन कठिनाइयों के बावजूद सह-उत्पादन के व्यापक उपयोग से औद्योगिक और आर्थिक विकास की पर्याप्त संभावनाएं हैं। □

10

उपसंहार

यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण होगा कि आधुनिक जीवनशैली ऊर्जा के अधिकाधिक उपभोग पर आधारित है। इसीलिए विश्वस्तर पर ऊर्जा की खपत में निरंतर वृद्धि हो रही है। लेकिन परंपरागत ईंधन के भंडार सीमित हैं। अतः ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों की तलाश जरूरी है।

उचित मूल्य पर पर्याप्त ऊर्जा का मिलते रहना किसी भी देश के आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है। इतिहास पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि अलग-अलग समय में अलग-अलग प्रकार की ऊर्जा की प्रधानता रही है। औद्योगिक क्रांति के दौरान, ऊर्जा का प्रमुख स्रोत कोयला था जो परंपराओं से चले आ रहे काम धंधों के व्यापारीकरण में दूरगामी परिवर्तन लाया। इसके बाद आया खनिज तेल, जिसने अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तनों की राह दिखाने में मदद की, विशेषकर परिवहन और औद्योगिक क्षेत्र में। वर्ष 1973 के बाद से ऊर्जा के ऐसे पुनः उपयोगी और प्रदूषण न करने वाले वैकल्पिक स्रोतों की खोज के बारे में अनुसंधान प्रारंभ हुआ जो हमारे देश के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकते हैं, जैसे-सौर ऊर्जा, पवन-ऊर्जा, बायोमास ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, समुद्री ऊर्जा, परमाणु ऊर्जा, हाइड्रोजन-ऊर्जा आदि।

इनमें से सौर ऊर्जा अत्यंत आकर्षक प्रतीत होती है। इसका स्रोत सूर्य है जिसकी ऊर्जा अनन्त है। पवन तथा जलशक्ति भी सौर ऊर्जा का प्रतिफलन है। चूंकि पौधों की वृद्धि में सूर्य के प्रकाश का विशेष महत्व है अतः बायोमास से भी सौर ऊर्जा का प्रत्यक्ष संबंध है। सौर ऊर्जा का गुण है - नवीकरणीयता, अखंडता, विकेंद्रीकरण और प्रदूषण रहित होना।

भारत जैसे विकासशील देशों के आर्थिक तथा सामाजिक स्तर को सुधारने

के तरीकों में से प्रमुख हैं - सौर ऊर्जा का सीधे कार्य में परिवर्तन।

अभी तक हमने सौर ऊर्जा का उचित उपयोग नहीं किया है। सूर्य की विकीर्ण ऊष्मा से यांत्रिक तथा वैद्युत शक्ति प्राप्त करना तथा वाष्प-इंजन चलाना तकनीकी दृष्टि से संभव है, किंतु ये सारी विधियां सिर्फ भविष्य की आशाएं हैं, वर्तमान की या भूतकाल की उपलब्धियां नहीं। एक प्रभावी यांत्रिक निकाय विकसित करने में धन से भी अधिक बड़ी बाधा ऊर्जा भंडारण की समस्या है। जब तक ऊर्जा का उपयोग न करना हो, तब तक इसे पृथ्वी, पानी या अन्य किसी माध्यम को गर्म करके संचित रखना अति आवश्यक है, साथ ही इनसे निर्दोष ऊष्मा रोधन की समस्याएं आ खड़ी होती हैं। वैसे भी, ऊष्मारोधन की अति उत्तम स्थितियों में भी ऊष्मीय ऊर्जा का क्षय हो ही जाता है।

दूसरी ओर रासायनिक निकार्यो का यह अंतर्निहित लाभ है कि अभिक्रिया उत्पादों का अनिश्चित काल तक भंडारण किया जा सकता है। अवशोषित ऊर्जा की पुनर्प्राप्ति अभी तक ऊष्माशोषी अभिक्रिया के प्रतीपन से की जा सकती है। लेकिन परंपरागत सपाट पट्टिका-संग्राहकों में ऐसा नहीं होता हे। परिचालन ताप में वृद्धि के साथ ही संग्राहक पट्टिका के कार्यरत माध्यम को बढ़ाने की आवश्यकता पड़ती है तथा साथ ही भंडारण ताप को बढ़ाने की आवश्यकता पड़ती है जिनके कारण संग्राहक पट्टिका तथा भंडारण की क्षमता में कमी आ जाती है। संभवतः सौर ऊर्जा के उपयोग में गंभीरतम समस्याएं निम्नांकित बातों पर आधारित हैं -

1. निरंतर ऊर्जा आपूर्ति की आवश्यकता
2. सौर ऊर्जा की अनुपस्थिति में, संपूरक ऊर्जा की उपलब्धि
3. सौर ऊर्जा भंडारण के किसी उपाय की उपलब्धि।

इनमें तृतीय तथा अंतिम पहलू विस्तृत है तथा इसके अंतर्गत सिर्फ वे प्रकाश-रासायनिक अभिक्रियाएं आती हैं जिनमें सूर्य के प्रकाश का उपयोग होता है। सुदूर भविष्य के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग प्रकाश के रूप में अधिक आशाजनक लगता है, ऊष्मा के रूप में नहीं।

कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार प्रकाश-रसायन सौर ऊर्जा के सदुपयोग की कुंजी हैं। प्रकाश-रसायन में शोध का उद्देश्य ऐसी अभिक्रियाओं की तलाश है, जो सूर्य के प्रकाश से उत्प्रेरित की जा सकें। प्रकाश-संश्लेषण में-जिससे हमें सारा भोजन तथा ईंधन प्राप्त होता है-सूर्य के प्रकाश का ही सदुपयोग होता है। ऐसी ही अन्य प्रकाश-रासायनिक अभिक्रियाएं ढूंढना हमारे लिए चुनौती है। ये अभिक्रियाएं बिना उपजाऊ जमीन और हरे पौधों के सूर्य के प्रकाश को ऊर्जा में रूपांतरित कर सकेंगी।

ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों में बायोमास-ऊर्जा का प्रयोग नया नहीं है, किंतु इस ओर वैज्ञानिकों के नए सिरे से आकर्षित होने का कारण यह है कि इस स्रोत की निरंतरता बनी रहती है तथा इसका पुनर्नवीकरण भी संभव है। ऊर्जा की पूर्ति की दृष्टि से लगाई जाने वाली फसलों के लिए दो प्रमुख निर्णायक शर्तें हैं-उनकी शीघ्र वृद्धि क्षमता और अधिकतम उत्पादन। बायोमास की अनेकानेक संभावनाओं को पहचान कर उनके लिए नई तकनीकें और उपयोग की विधियां ढूंढी जा चुकी हैं। बायोमास में अंतर्निहित संपूर्ण ऊर्जा शक्ति आदि व्यवस्थित साधनों से सफलतापूर्वक प्रयोग में लाई जा सके तो वह निकट भविष्य में हमारी ऊर्जा संबंधी मांगों के एक भारी प्रतिशत (57 प्रतिशत) की पूर्ति करने में समर्थ होगी।

पौधों से ऊर्जा प्राप्त करने के अपने प्रयासों के दौरान वैज्ञानिकों को बहुत से ऐसे पौधों का पता चलता है जो सौर ऊर्जा का कुछ भाग हाइड्रोकार्बनों के रूप में संशोधित करने की क्षमता से युक्त होते हैं। इस खोज का इस दृष्टिकोण से भी उपयोग है कि पेट्रोलियम भी विभिन्न हाइड्रोकार्बनों का जटिल मिश्रण होता है, जिसमें ऊर्जा उत्पादन सर्वाधिक अंश हाइड्रोकार्बनों का ही है। पिछले दो दशकों से ऊर्जा-संकट की विश्वव्यापी समस्या से निपटने के लिए मानव उन सभी स्रोतों की खोजबीन में लग गया है जिनसे ऊर्जा प्राप्ति की तनिक भी संभावना है।

पशुओं के गोबर, कृषि तथा उद्योगों के अपशिष्ट तथा घरेलू कूड़े कचरे से बायोगैस ऊर्जा प्राप्त की जाती है। आज के विकसित संयंत्रों में जलकुंभी, समुद्री शैवालों, सुअरबाड़ों तथा मुर्गीखानों के कचरे और यहां तक कि मानव मल तक का इस्तेमाल भी बायोगैस बनाने में किया जा रहा है। बायोगैस जहां एक ओर हमारी

ऊर्जा की समस्या का हल प्रस्तुत करती है वहीं व्यर्थ तथा अनुपयोगी अपशिष्ट पदार्थों का इस्तेमाल करके प्रदूषण कम करने में भी सहायक होती है।

ऊर्जा संकट के इस दौर में ऊर्जा के जिन संभावित विकल्पों ने वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित किया है उनमें पवन-ऊर्जा, समुद्र-ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, हाइड्रोजन ऊर्जा, परमाणु ऊर्जा विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

बहते पवन वेग में अत्यधिक ऊर्जा समाई होती है। पवन-चक्कियों द्वारा इसी ऊर्जा को प्राप्त करके अन्य प्रकार की ऊर्जाओं में परिवर्तित कर लिया जाता है। पवन-ऊर्जा के पक्ष में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि ऊर्जा का यह साधन सबसे सस्ता, सुलभ और प्रदूषणरहित है। हमारे देश में कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, राजस्थान और हिमालय के पर्वतीय प्रदेशों में पवन-ऊर्जा का प्रयोग असीमित संभावनाओं से युक्त है।

समुद्र स्वयं में ऊर्जा का विशाल भंडार संजोए हुए है। विकसित तकनीकों द्वारा इस ऊर्जा का उपयोग किया जा रहा है। समुदी ऊष्मा ऊर्जा रूपांतरण "ओटेक" द्वारा समुद्र की विभिन्न परतों के बीच के प्राकृतिक तापांतर का उपयोग कर विद्युत् उत्पादन किया जा रहा है। हमारे देश में राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान द्वारा इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है। अरब सागर तथा बंगाल की खाड़ी जैसे कुछ क्षेत्र संयंत्रों की स्थापना के लिए बहुत ही उपयुक्त हैं। ज्वार-भाटा से विद्युत् ऊर्जा के उत्पादन हेतु विशेष रूप से निर्मित संयंत्रों का उपयोग किया जाता है क्योंकि ज्वार-भाटा में वेग की दिशा तथा क्षेत्र आदि का ध्यान रखना अति आवश्यक है।

ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों में भूतापीय ऊर्जा विशेष रूप से उल्लेखनीय है। साधारणतया भूतापीय ऊर्जा से आशय पृथ्वी के गर्भ में छिपी उस ऊर्जा से है जो सूखी गर्म चट्टानों, ज्वालामुखियों, गर्म जल-स्रोतों और भाप कुंडों में संचित है। हमारे देश में भूतापीय ऊर्जा के भंडार उत्तर-पश्चिम हिमालय, पश्चिमी घाट, नर्मदा, सोनघाटी और दामोदर घाटी के क्षेत्रों में स्थित हैं। भूतापीय ऊर्जा वर्तमान ऊर्जा संकट का संपूर्ण समाधान तो नहीं कर सकती किंतु किसी सीमा तक समस्या को कम अवश्य कर सकती है।

आजकल परमाणु-ऊर्जा पर आधारित विद्युत्गृह स्थापित किए जा रहे हैं जो ऊर्जा के विकल्प के रूप में महत्वपूर्ण हैं। परमाणु ऊर्जा यूरेनियम, थोरियम, प्लूटोनियम आदि रेडियोऐक्टिव तत्वों के नाभिकीय विघटन से प्राप्त होती है।

हाइड्रोजन एक बहुत अच्छा ऊर्जा स्रोत हो सकता है क्योंकि यह पृथ्वी पर जल के रूप में अनंत मात्रा में उपलब्ध है। इस जल से असीमित मात्रा में हाइड्रोजन उत्पादित की जा सकती है। हाइड्रोजन को यदि भविष्य की ऊर्जा कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। निकट भविष्य में जल से हाइड्रोजन बनाने के लिए कुछ सरल तकनीकें खोजी जाएंगी और तब हाइड्रोजन एक सस्ती और प्रदूषण रहित ऊर्जा के रूप में प्रचलित हो जाएगी। □

(क) : उपयोगी सारणियाँ:

सारणी-1: ऋतुओं के अनुसार विभिन्न कृषि छीजनों/उपजातों की वार्षिक उपलब्धि

कृषि छीजन/उपजात	तिमाही उपलब्धि, करोड़ टन			
	पहली	दूसरी	तीसरी	चौथी
फसलों के छीजन अवशेष				
अनाज	2.15	2.45	2.67	22.11
दालें	0.36	0.36	0.36	0.36
तिलहन	–	–	0.29	0.29
बागानी फसलें	0.86	0.86	0.86	0.86
रेशेदार फसलें	0.06	0.06	1.130	1.490
फल	0.05	0.113	0.113	0.05
सब्जियां	0.03	0.03	0.03	0.03
कृषि औद्योगिक उपजात				
धान की भूसी	–	–	–	1.800
जूट मिल अपशिष्ट	0.012	0.012	0.012	0.012
कपास धूलि	0.008	0.008	0.008	0.008
बिनौले के तंतु	0.003	0.003	0.003	0.003
गन्ने की खोई	0.175	0.175	–	0.175
शीरा	0.07	0.07	–	0.07
बुरादा	0.05	0.05	0.05	0.05

कृषि छीजन/उपजात	तिमाही उपलब्धि, करोड़ टन			
	पहली	दूसरी	तीसरी	चौथी
पशु और पॉल्ट्री अपशिष्ट पदार्थ				
गीला गोबर	21.5	21.5	21.5	21.5
पशु मूत्र	0.925	0.925	0.925	0.925
भेड़ और बकरी अपशिष्ट	1.125	1.125	1.125	1.125
पॉल्ट्री अपशिष्ट	0.025	0.025	0.025	0.025
मत्स्य और समुद्री अपशिष्ट	0.036	0.036	0.036	0.036
सामुदायिक अपशिष्ट	3.75	3.75	3.75	3.75
कुल	31.489	31.552	31.887	44.669

कुल योग 1395.99 मैगा टन

सारणी-2: कृषि और वन-उत्पादों (शुष्क) के रूप में प्रयुक्त कुल वार्षिक सौर ऊर्जा

क्रमांक	उत्पाद	उत्पाद करोड़ टन	कुल ऊर्जा समतुल्य $X10^9$ मेगा जूल
1.	चावल	5.268	926.42
2.	गेहूं	3.133	250.97
3.	ज्वार	1.182	207.84
4.	मक्का	0.595	59.79
5.	सोयाबीन	0.045	7.62
6.	मिलेट (ज्वार-बाजरा)	0.211	35.34
7.	दालें	1.180	172.92
8.	मूंगफली	0.607	138.76
9.	अन्य तिलहन	0.471	82.82
10.	आलू	0.815	146.75
11.	फल	1.256	223.50
12.	काष्ठ-फल	0.100	20.94
13.	सब्जियां	0.400	20.94
14.	चीनी और गुड़	2.300	375.57
15.	कंद	1.533	269.60
16.	चरागाह और अन्य	4.500	565.25
17.	वन	6.900	1155.61
	कुल	30.469	5010.04

सारणी - 3: संभावित बायोमास और उनकी उपज संभावना

	वृक्ष	उत्पादन संभावना
1.	वृक्ष/लकड़ी	
	ल्यूसीना ल्यूकोसेफेला	60 घन मीटर हेक्टेयर प्रतिवर्ष कुछ
	एकेशिया जाति	प्रजातियां अच्छी मिट्टी में उगाने पर
	केलियेंड्रा जाति	लकड़ी/हेक्टेयर/वर्ष प्रदान करती हैं।
	सेस्बानिया जाति	
	यूकेलिप्टस जाति	
	केसुअराइना जाति	
2.	हाइड्रोकार्बन-पौधे	
	यूफोर्बिया वर्ग	अर्धमरू क्षेत्र, 17
	यूफोर्बिया लेथाइरस	बैरल/हेक्टेयर/वर्ष, 36
	यूफोर्बिया तिस्कैली	बैरल/हेक्टेयर/वर्ष
3.	तेल उत्पादक पौधे	
	सोयाबीन	विभिन्न जलवायुवीय देशों और मिट्टी
		में उगाए जा सकते हैं,
	सूरजमुखी	डीज़ल इंजन के ईंधन या उसमें मिश्रण
	मूंगफली	के लिए
4.	शर्करा/मंड युक्त फसलें	
	गन्ना	50 टन गन्ना प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष
		120 टन प्रति हेक्टेयर (हवाई)
		3600 लीटर एलकोहल प्रति हेक्टेयर
	मीठी ज्वार	45 टन प्रति हेक्टेयर/वर्ष
		3,500 लीटर एलकोहल/हेक्टेयर
		खराब मिट्टी 10-12 टन/हेक्टेयर/वर्ष
		2,160 लीटर एलकोहल/हेक्टेयर

	वृक्ष	उत्पादन संभावना
5.	अन्य फसलें	
	मक्का	6 टन/हेक्टेयर-2200 लीटर
	चावल	-
	अनाज	-
6.	हरे घासपात	
	ट्रांपक ग्रास	अधिक सेलुलोस के कारण एलकोहल
	एलीफैंट ग्रास	उत्पादन के लिए अनुपयुक्त, चारकोल
	(नेपियर घास)	के लिए उपयोगी, गैस या द्रव ईंधन के लिए उपयुक्त
7.	जलीय फसलें	
	जलकुंभी	पशु आहार/ऊर्जा उपयोग (बायोगैस) और उर्वरक
	डकवीड	50 टन/हेक्टेयर/वर्ष (शुष्क सामग्री)
	सीवीड	आहार का स्रोत, ऊर्जा, तथा ईंधन के लिए उपयोग, 90 टन/हेक्टेयर
	सीकैल्प	मेथेन गैस उत्पादन के लिए, अनुमान है कि समुद्री खेती में प्रति हेक्टेयर कैल्प से 100 लाख किलो कैलोरी आहार और लगभग 1000 लाख किलो कैलोरी मेथेन प्रतिवर्ष प्राप्त हो सकती है।

सारणी - 4: पेट्रोलियम की अनुमानित मांग

वर्ष	मांग (लाख टन)
1985-86	440
1990-91	570
2000-01	920

सारणी - 5: कुछ ईंधनों के कैलोरी मान

ईंधन	कैलोरी मान		
	बी.टी.यू.'/ पौंड	किलोकैलोरी/ किलोग्राम	किलोकैलोरी/ लीटर
गैसोलीन	18,900	10,500	7,700
डीज़ल	18,500	10,280	8,738
ईंधन तेल (नं. 6)	17,200	9,560	8,795
एथेनाल	11,500	6,390	5,048
मेथेनाल	8,570	4,760	3,790
कोयला (कम राख वाला)	8000-10,000	4440-5550	

ब्रिटिश थर्मल यूनिट

सारणी - 6: भारत में थलीय बायोमास का वार्षिक उत्पादन

		भूमि क्षेत्र (करोड़ हेक्टेयर)	बायोमास उत्पादन (करोड़ टन)
1.	कृषिगत भूमि	16.3	90.0
2.	चरागाह और पशुचारण भूमि	1.3	4.5
3.	वन	6.6	26.2
4.	अन्य	8.4	4.2
	कुल	32.6	124.9

सारणी - 7: बायोमास की अनुमानित संभाव्य ऊर्जा

संसाधन	कुल मात्रा (करोड़ टन)	रूपांतरण हेतु अनुमानित (उपलब्ध ऊर्जा) (करोड़ टन)	ऊर्जा समतुल्य $X10^9$ मैगाजूल
पशुधन अवशेष (आर्ट)	86.0	54.0	628.1
शस्य (फसल) अवशेष	27.3	4.0	520.4
फसल और सब्जी संसाधन अपशिष्ट	3.5	1.0	83.5
जलाऊ लकड़ी	26.0	13.0	2177.2
सामुदायिक अपशिष्ट	15.0	5.0	62.8
कुल	157.8	78.0	3454.2

कुल संभाव्य ऊर्जा : $3.45X10^{12}$ मैगाजूल

वर्तमान ऊर्जा खपत : $4.73X10^{12}$ मैगाजूल

वर्तमान ऊर्जा खपत पर आधारित : 77 प्रतिशत

(संभाव्य बायोमास ऊर्जा का प्रतिशत)

वर्तमान हिस्सा : 40 प्रतिशत

सारणी-8 : जुगाली पशु द्वारा प्रतिदिन गोबर उत्पादन और उसका निपटान

राज्य	प्रति जुगाली पशु द्वारा प्रतिदिन गोबर का उत्पादन (किलोग्राम)	उत्पादित गोबर का प्रतिशत		
		खाद के लिए	उपले बनाने के लिए	अन्य कार्यों के लिए
आंध्र प्रदेश	3.6	89	7	4
बिहार	3.6	40	59	1
गुजरात	3.7	76	24	x
हरियाणा	6.8	51	47	2
हिमाचल प्रदेश	5.3	98	2	x
कर्नाटक	2.9	88	9	3
केरल	2.6	93	4	3
मध्य प्रदेश	2.6	70	29	1
महाराष्ट्र	3.2	86	11	3
पंजाब	7.0	52	47	1
राजस्थान	5.7	67	30	3
तमिलनाडु	5.8	77	19	5
उत्तर प्रदेश	4.7	48	48	4

x नगण्य

सारणी-9 : विभिन्न बायोमास स्रोतों से जैव ईंधन का उत्पादन और शुद्ध ऊर्जा उत्पादन प्रति किलोग्राम (शुष्क)

बायोमास सबस्ट्रेट	रूपांतरण तकनीक	उत्पादित जैव ईंधन	शुद्ध ऊर्जा उत्पादन प्रति किलोग्राम शुष्क बायोमास मैगाजूल/किलोग्राम
पशु-खाद	अवायवीय पाचन	ईंधन, तेल, गैस लकड़ी का कोयला	3282.6
शहरी कचरा	ताप अपघटन	-	5933.0
शहरी कचरा	सीधा ज्वलन	-	16,492.6
खाद्य संसाधन अपशिष्ट	अवायवीय पाचन		3056.5
शर्करा फसलें	एथेनॉल किण्वन		6184.8
वन बायोमास	सीधा ज्वलन	बिजली	3814.8
वन बायोमास	सीधा ज्वलन	-	15,659.4
नगरपालिका सीवेज	अवायवीय पाचन		3282.6

सारणी-10: कृषि छीजन और उपजातों का वार्षिक उत्पादन

कृषि छीजन और उपजात	लगभग मात्रा करोड़ टन/वर्ष
शस्य (फसल) अवशेष	
अनाज	19.68
दालें	1.44
तिलहन	0.58
बागानी फसल	3.44
रेशेदार फसल	1.74
फल	0.33
सब्जियां	0.12
कुल	27.33
कृषि औद्योगिक उपजात	
धान-भूसी	1.80
जूट मिल अपशिष्ट	0.05
कपास धूलि	0.03
गन्ना खोई	0.53
शीरा	0.21
बुरादा	0.21
कुल	2.83

कृषि छीजन और उपजात	लगभग मात्रा करोड़ टन/वर्ष
पशु और पॉल्ट्री अपशिष्ट पदार्थ	
गीला गोबर	86.0
पशु मूत्र	3.7
भेड़ और बकरी के व्यर्थ पदार्थ	4.5
पॉल्ट्री के व्यर्थ पदार्थ	0.1
कुल	94.3
मत्स्य और समुद्री अपशिष्ट पदार्थ	0.14
सामुदायिक व्यर्थ पदार्थ	15.0
कुल वार्षिक छीजन और उपजात	1396 मैगा टन

(ख) : संदर्भ

1. "विज्ञान" (1983), "ऊर्जा विशेषांक", जनवरी-मार्च 1983
2. "आविष्कार" (1987), जून-जुलाई, 1987
3. दिनेश मणि (1990), "ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत", ग्राम विकास प्रकाशन, 172, कमिश्नर कंपाउंड कॉलोनी, इलाहाबाद
4. मिश्रा, शिवगोपाल एवं दिनेश मणि (1990), "ऊर्जा संरक्षण के कुछ महत्वपूर्ण पहलू", "आविष्कार" सितंबर, 1990
5. शर्मा, श्याम सुन्दर (1995) "ऊर्जा का विशाल स्रोत", "आविष्कार", अप्रैल, 1995
6. दिनेश मणि (1995) "भारत में ऊर्जा के नए स्रोत", "विज्ञान गंगा" सितंबर, 1995
7. दिनेश मणि (1995), "ऊर्जा फसलों का महत्व", "किसान-ज्योति" अक्टूबर-दिसंबर, 1995
8. क्षितिज (1996), "ऊर्जा संरक्षण विशेषांक", मार्च, 1996
9. दिनेश मणि (1997) "ऊर्जा -संकट की चुनौती स्वीकार करतीं ऊर्जा फसलें" "विज्ञान गरिमा सिंधु", संयुक्त अंक 23, 1997
10. "क्षितिज" (1997-98) "सौर ऊर्जा विशेषांक", सितम्बर,1997 - मार्च, 1998
11. मुखर्जी, प्रदीप कुमार (1998), "समय की मांग है ऊर्जा संरक्षण", "आविष्कार", जुलाई, 1998
12. दिनेश मणि (1999) "बदलते ग्रामीण परिवेश में बायोगैस की प्रासंगिकता" "कुरुक्षेत्र", फरवरी, 1999

पारिभाषिक शब्दावली (हिंदी-अंग्रेजी)

अनवीकरणीय	non renewable
अपघटन	decomposition
अपरंपरागत	non-conventional
अपशिष्ट	waste
अवशिष्ट	residue
अवायवीय पाचन	anaerobic digestion
उपभोग	consumption
ऊर्जा	energy
ऊर्जा शस्य (फसल)	energy crops
औद्योगिकीकरण	industrialisation
कंपोस्ट	compost
कचरा	garbage
किण्वन	fermentation
कृषि उत्पाद	agricultural produce
कृषीय अपशिष्ट	agricultural waste
खाद	manure
गतिज ऊर्जा	kinetic energy
गोबर	dung, cow dung
ग्रामीण क्षेत्र	rural area
ग्रीन हाउस प्रभाव	green house effect
जंतु अपशिष्ट	animal waste
जनसंख्या	population
जीवाणु	bacteria
जीवन-स्तर	life status

जैव निम्नीकरण	bio degradation
जैव पदार्थ/जैवमात्रा	biomass
ज्वलनशील	combustible
ज्वारीय ऊर्जा	tidal energy
ठोस अपशिष्ट	soiid waste
तापमान	temperature
नगरीय क्षेत्र	urban areas
नवीकरणीय	renewable
नील हरित शैवाल	blue green algae
पनचक्की	water mill
परंपरागत	conventional
परमाणु-ऊर्जा	atomic energy
पवन-चक्की	wind mill
पवन दिशा	wind direction
पवन वेग	wind velocity
पर्यावरण	environment
प्रदूषण	pollution
प्रदूषक	pollutant
बायोगैस	biogas
भूतापीय ऊर्जा	geothermal energy
रेडियोएक्टिव तत्व	radioactive element
वायुजीवी	aerobic
वायु वेग	wind velocity
विखंडन	fission
विच्छेदन	breakdown
वायुमंडल	atmosphere
विद्युत्गृह	powerhouse

शैवाल	algae
संग्रह	collection
संघटन	composition
सक्रिय क्षेत्र	active area
सक्रियण ऊर्जा	activation energy
समुद्री खरपतवार/सी वीड	sea weed
समुद्र तली	sea bottom
समुद्र विज्ञान	oceanography
सूक्ष्मजीव	microorganism
सौर तापन	solar heating
सौर ऊर्जा	solar energy
हरित गृह प्रभाव/ग्रीन हाउस प्रभाव	green house effect

active area	सक्रिय क्षेत्र
activation energy	सक्रियण ऊर्जा
aerobic	वायुजीवी
aerial velocity	वायव वेग
agricultural produce	कृषि उत्पाद
agricultural waste	कृषीय अपशिष्ट
algae	शैवाल
anaerobic	अवायवीय
anaerobic digestion	अवायवीय पाचन
atmosphere	वायुमंडल
atomic energy	परमाणु-ऊर्जा
bacteria	जीवाणु
biodegradable	जैव निम्नकरणीय
biomass	बायोमास (जैवमात्रा)
biogas	बायोगैस
blue green algae	नील हरित शैवाल
breakdown	विच्छेदन
characteristic	विशेषता
collection	संग्रह
combustible	ज्वलनशील
composition	संघटन
compost	कंपोस्ट
consumption	उपभोग
conventional	परंपरागत, पारंपरिक
decomposition	अपघटन

dung	गोबर
electricity	विद्युत्
electrical	वैद्युत्
energy	ऊर्जा
energy crop	ऊर्जा फसल
environment	पर्यावरण
environmental pollution	पर्यावरणी प्रदूषण
fermentation	किण्वन
fission	विखंडन
garbage	कचरा
geothermal energy	भूतापीय ऊर्जा
green house effect	हरित गृह प्रभाव/ग्रीन हाउस प्रभाव
heat	ऊष्मा
industrialisation	औद्योगीकरण
kinetic energy	गतिज ऊर्जा
manure	खाद
microorganism	सूक्ष्मजीव
non-conventional	अपरंपरागत, अपारंपरिक
non-renewable	अनवीकरणीय
nutrient	पोषक तत्व
ocean	महासागर, समुद्र
oceanography	समुद्र विज्ञान
pollution	प्रदूषण
population	जनसंख्या, आबादी
power house	बिजलीघर
radio-active element	रेडियोएक्टिव तत्व
renewable	नवीकरणीय

residue	अवशिष्ट
rural area	ग्रामीण क्षेत्र
sea board	समुद्र तट
sea bottom	समुद्र तली
sea weed	समुद्री खरपतवार, सी वीड
solar eclipse	सूर्य-ग्रहण
solar energy	सौर ऊर्जा
solar heating	सौर तापन
solid waste	ठोस अपशिष्ट
temperature	तापमान
urban area	नगरीय क्षेत्र
urban development	नगरीय विकास
waste	अपशिष्ट
water mill	पनचक्की
wind energy	पवन-ऊर्जा
wind direction	वायु-दिशा
wind velocity	वायु वेग

□

102/CSTT/ND/2K-1000 Books Oct,2K MGITBP/Chdg

PED -789

1000-2000 - DSK -II

Price-₨.105

Printed by the Manager, Government of India Text-Books Press, Chandigarh-160002 and published by the Controller of Publications, Civil Lines, Delhi-110054.